प्रसार दूत

कृषि विज्ञान की अग्रणी पत्रिका

पूसा कृषि विज्ञान मेला विशेषांक

जनवरी–मार्च, 2026

कृषि प्रौद्योगिकी सूचना केन्द्र (एटिक)

कृषि प्रौद्योगिकी आकलन एवं स्थानान्तरण केन्द्र
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान
नई दिल्ली–110012

संपादकीय

भारत की पहचान सदियों से कृषि प्रधान देश के रूप में रही है, परंतु आज हमारा देश केवल कृषि प्रधान नहीं, बल्कि दुनिया की उभरती हुई कृषि महाशक्ति है। हम केवल खाद्य सुरक्षा में आत्मनिर्भर नहीं, बल्कि दुनिया की खाद्य आपूर्ति में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। स्वतंत्रता के समय भूख, कुपोषण और खाद्यान्न की भारी कमी से जूझता भारत आज खाद्यान्न, दुग्ध, फल-सब्जियों, दालों और मसालों के उत्पादन में विश्व के अग्रणी देशों में शामिल है। हमारा देश आज दुग्ध उत्पादन में विश्व में प्रथम स्थान पर है। दालों के उत्पादन में भारत विश्व का सबसे बड़ा उत्पादक है। चावल, गेहूँ, गन्ना, सब्जियाँ, मसाले और बागवानी फसलों में भारत ने अद्भुत वृद्धि दर दर्ज की है। यह प्रगति किसी एक नीति, किसी एक तकनीक या किसी एक व्यक्ति की देन नहीं है; यह हमारे अन्नदाताओं की मेहनत, वैज्ञानिकों की तपस्या और सरकार व किसानों के सामूहिक प्रयासों का परिणाम है।

इस समृद्ध यात्रा में भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान (पूसा संस्थान) ने ऐतिहासिक भूमिका निभाई है। यह संस्थान केवल एक शोध संस्थान नहीं, बल्कि भारत की कृषि क्रांति का जनक है। हरित क्रांति की सफलता का आधार रही गेहूँ की उच्च उपज वाली किस्में इसी संस्थान ने विकसित की थीं। आज भी पूसा संस्थान बेहतर किस्मों, स्मार्ट कृषि तकनीकों, जलवायु-सहिष्णु फसलों, मूल्य-वर्धित उत्पादों, डिजिटल कृषि और जैव प्रौद्योगिकी के क्षेत्रों में देश का नेतृत्व कर रहा है। हम सब जानते हैं की संस्थान ने अब तक 450 से अधिक उच्च गुणवत्ता वाली फसल किस्में विकसित की हैं, जिनसे उत्पादन और उत्पादकता दोनों में क्रांतिकारी वृद्धि हुई है।

कृषि में रोजगार के अनन्य अवसर हैं । कृषि शिक्षा को उद्यमिता और स्टार्ट-अप्स विकास की ओर उन्मुख करना होगा तथा इसके लिए कौशल विकास पर ध्यान देने की आवश्यकता होगी । कृषि आधारित स्टार्ट-अप्स ने भारतीय अर्थव्यवस्था को नई दिशा दी है और इसके माध्यम से कई युवा अपनी प्रतिभा और विचारों को वास्तविकता में बदलने में सफल हुए हैं। आज भारत में एग्रीटेक आधारित स्टार्टअप कृषि में कृत्रिम बुद्धिमत्ता और मशीन लर्निंग के उपयोग को बढ़ावा दे रहे हैं। ये स्टार्टअप कृषि की चुनौतियों का समाधान कर रहे हैं, जिसमें जल, उर्वरक और अन्य रसायनों के प्रभावी एवं अल्प उपयोग द्वारा सटीक कृषि या प्रिसिजन फार्मिंग को सफल बनना और कृत्रिम बुद्धिमत्ता से कीट व् व्याधियों के संक्रमण की सही समय पर पहचान और उपचार आदि प्रमुख हैं । अटल इनोवेशन मिशन (एआईएम) जिसमें स्व-रोजगार और प्रतिभा उपयोग (एसईटीयू) शामिल है, नवाचार(Innovation) और उद्यमिता की संस्कृति को बढ़ावा देने के लिए भारत सरकार का एक सरहनीय प्रयास है।

संयुक्त राष्ट्र द्वारा वर्ष 2026 अंतर्राष्ट्रीय महिला कृषक वर्ष के रूप में मनाया जा रहा है। कृषि में महिलाओं का सशक्तिकरण एक बहुत ही महत्वपूर्ण शोध, प्रशिक्षण और उपयुक्त नीति निर्धारण का विषय है । भारत सरकार ने लखपति दीदी योजना आरम्भ किया है, जिसका उद्देश्य ग्रामीण महिलाओं को आर्थिक रूप से सशक्त बनाना है, ताकि उन्हें स्वयं सहायता समूहों (SHGs) के माध्यम से स्थिर आय प्राप्त कर सकें, जिससे वे कम से कम ₹1 लाख वार्षिक आय प्राप्त कर सकें। 2026 तक, इस योजना का उद्देश्य 3 करोड़ से अधिक महिलाओं को लखपति बनाना है। यह योजना कौशल विकास, ₹5 लाख तक का ब्याज-मुक्त ऋण, और उद्यमिता के लिए सहायता प्रदान करती है।

पूसा संस्थान **"विकसित कृषि – आत्मनिर्भर भारत"** जैसे महत्त्वपूर्ण विषय पर पूसा कृषि विज्ञान मेला 2026 का भी आयोजन कर रहा है। यह मेला केवल एक आयोजन भर नहीं है, बल्कि भारत की समृद्ध कृषि विरासत, वैज्ञानिक अनुसंधान और खेती में नवाचार को आगे बढ़ाने वाले एक सशक्त आंदोलन का प्रतीक है। हमारे अन्नदाता, नवप्रवर्तक और सच्चे राष्ट्र निर्माता; हमारे किसान इस परिवर्तनकारी यात्रा के मूल हैं। मेले में समसामायिक विषयों को शामिल किया गया जिसमें महत्वपूर्ण फसलों की तकनीकी जानकारी, मूल्य श्रंखला विकास, स्मार्ट खेती एवं संरक्षित कृषि मॉडल, कृषि विपणन एवं निर्यात, किसान उत्पादक संगठन, किसानों के नवाचार इत्यादि महत्वपूर्ण विषयों पर वैज्ञानिक एवं किसान संवाद किए जाते है। साथ ही इस मेले में रबी फसलों की उत्पादन तकनीकों, सब्जियों तथा फूलों की संरक्षित खेती, जैव उर्वरक, कृषि और सिंचाई प्रौद्योगिकी पर लाइव प्रदर्शन एवं कृषि उपकरण, फसलों की उच्च उपज देने वाली किस्मों और नवीन किसान उत्पादों का विस्तृत प्रदर्शन और बिक्री भी होती है ।

इस मेले का यह लाभ है कि दिल्ली एनसीआर, जिसमें पश्चिमी उत्तर प्रदेश, हरियाणा तथा पंजाब और राजस्थान के नजदीकी स्थानों के किसान बड़ी संख्या में भाग लेते हैं, बल्कि देश के अन्य भागों के किसान भी बुलाए जाते हैं जो कृषि से संबंधित तमाम अद्यतन जानकारियों को ग्रहण करते हुए देश के विभिन्न भागों में प्रसारित करते हैं। इस किसान मेले का महत्व और भी बढ़ जाता है क्योंकि इसमें कृषि, पशुपालन, फसल सुरक्षा, प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण और प्रबंधन, कुकुटपालन, मौन पालन और ऐसे तमाम कृषि संबंधित विषयों का ज्ञान एक ही स्थान पर प्राप्त हो जाता है।

'प्रसार दूत' के इस विशेष अंक में फसलों से संबंधित कृषि के नवीनतम आयामों को समाहित किया गया है। इस अंक में ग्रीष्मकालीन मौसमी फूलों की व्यावसायिक खेती एवं बीज उत्पादन, प्रभावी जलवायु परिवर्तन अनुकूलन हेतु ग्रामीण महिलाओं का नेतृत्व एवं सशक्तिकरण, ऑयस्टर मशरूम खेती: ग्रामीण महिलाओं के लिए स्थायी आजीविका और सशक्तिकरण का बेहतरीन साधन, बीज, मिट्टी और जल का संतुलन: उत्पादन बढ़ाने की नई राह, भारतीय शैली से खाना पकाने के लिए स्वास्थ्यवर्धक खाद्य तेल का चयन, महिला कृषक: सतत कृषि, खाद्य सुरक्षा एवं ग्रामीण सशक्तिकरण का आधार, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान में सरसों की गुणवत्ता प्रजनन के दो दशक: उपलब्धियां और भविष्य की चुनौतियां, जैविक रोग नियंत्रण: सतत फसल उत्पादन में महिला किसानों के लिए सुरक्षित और लाभकारी कृषि समाधान, राष्ट्रीय कृषि बाजार (ई-नाम): कृषि विपणन की समस्याओं के समाधान हेतु भारत सरकार का प्रयास, मशरूम की खेती, अमरूद की सफल बागवानी, सौर ऊर्जा आधारित वर्षा रोबोट द्वारा सटीक खरपतवार नियंत्रण और बुवाई, किसान सारथी जैसे महत्वपूर्ण विषय शामिल किए गए हैं।

हमें विश्वास है कि यह विशेषांक आपके लिए ज्ञानवर्धक एवं उपयोगी सिद्ध होगा तथा कृषि के बदलते परिदृश्य को समझने में सहायक बनेगा। आपकी प्रतिक्रिया हमारे लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। कृपया अपने सुझावों और विचारों से हमें अवगत कराएँ, ताकि हम भविष्य में और अधिक उपयोगी सामग्री प्रस्तुत कर सकें।

संपादक

भाकृअनुप
ICAR

प्रसार दूत

जनवरी-मार्च, 2026

वर्ष 31 **अंक 1** **2026**

संरक्षक

डॉ. सीएच. श्रीनिवास राव

निदेशक

डॉ. रविन्द्र पडारिया

संयुक्त निदेशक (प्रसार)

प्रधान सम्पादक

डॉ. ए.के. सिंह

सम्पादक

डॉ. एन.वी. कुंभारे

सम्पादक मंडल

डॉ. मधुबाला ठाकरे

डॉ. मलखान सिंह गुर्जर

डॉ. सुभाष बाबू

डॉ. गिरजेश महरा

डॉ. वाई पी सिंह

डॉ. परगट सिंह

तकनीकी सहयोग

श्री विजय सिंह जाटव

श्री लक्खी राम मीणा

श्री राजेश सिंह

शुल्क और लेख भेजने एवं पत्रिका मंगाने का पता

कृषि प्रौद्योगिकी सूचना केन्द्र (एटिक)

भा.कृ.अ.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान

नई दिल्ली-110012

फोनः 011-25841039, 011-25841670

ई-मेंलः incharge_atic@iari.res.in

वेबसाइटः www.iari.res.in

वार्षिक शुल्क ₹ 150/- मनीआर्डर द्वारा

विषय सूची **पृष्ठ संख्या**

सम्पादकीय

1. ग्रीष्मकालीन मौसमी फूलों की व्यावसायिक खेती एवं बीज उत्पादन 1
2. प्रभावी जलवायु परिवर्तन अनुकूलन हेतु ग्रामीण महिलाओं का नेतृत्व एवं सशक्तिकरण 5
3. ऑयस्टर मशरूम खेती: ग्रामीण महिलाओं के स्थायी आजीविका और सशक्तिकरण का बेहतरीन साधन। 9
4. बीज, मिट्टी और जल का संतुलन: उत्पादन बढ़ाने की नई राह 13
5. भारतीय शैली से खाना पकाने के लिए स्वास्थ्यवर्धक खाद्य तेल का चयन 16
6. महिला कृषक : सतत कृषि, खाद्य सुरक्षा एवं ग्रामीण सशक्तिकरण का आधार 20
7. स्वस्थ नारी, सशक्त नारी: सोयाबीन के साथ 23
8. भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान में सरसों की गुणवत्ता प्रजनन के दो दशक: उपलब्धियां और भविष्य की चुनौतियां 26
9. जैविक रोग नियंत्रण: सतत फसल उत्पादन में महिला किसानों के लिए सुरक्षित और लाभकारी कृषि समाधान 29
10. राष्ट्रीय कृषि बाजार (ई-नाम): कृषि विपणन की समस्याओं के समाधान के लिए भारत सरकार द्वारा एक प्रयास 32
11. आंवला मूल्य संवर्धन: स्वास्थ्य और समृद्धि 35
12. मशरूम की खेती: सीमित संसाधनों में अतिरिक्त आय और महिला किसानों के सशक्तिकरण का साधन 38
13. अमरूद की सफल बागवानी : श्रीमती लक्ष्मीमनोज खंडेलवाल की कहानी 41
14. सौर ऊर्जा आधारित वर्षा रोबोट द्वारा सटीक खरपतवार नियंत्रण और बुवाई 42
15. किसान सारथी : डिजिटल एग्रीकल्चर का नया युग 46
16. महिला किसानों द्वारा जैव-उर्वरकों का वैज्ञानिक प्रयोग: सतत कृषि एवं सशक्तिकरण की दिशा में एक प्रभावी दृष्टिकोण 49

ग्रीष्मकालीन मौसमी फूलों की व्यावसायिक खेती एवं बीज उत्पादन

नमिता, एम के सिंह, सपना पंवर, अमर सिंह धामा एवं सौजन्या हलागती

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

फूल विभिन्न अवसरों पर मनुष्य के व्यक्तित्व को सजाने एवं संवारने में अपना महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। पुष्प विज्ञान वर्तमान में एक प्रमुख व्यवसाय के रूप में उभरता जा रहा है। एकवर्षीय पौधों का हर ऋतु में उद्यान के वातावरण को रंगमय बनाने में सबसे अधिक योगदान होता है। मौसम के अनुकूल उगाए जाने वाले पुष्पीय पौधों को मौसमी पुष्प और एकवर्षीय पौधे कहते हैं। इस समूह के पौधों का जीवन चक्र एक मौसम अथवा अधिकतम् एक वर्ष होता है। विभिन्न रंगो जैसे लाल, गुलाबी, नारंगी, पीला, सफेद, नीला इत्यादि वाले मौसमी फूल घरों, बंगलो, होटल, कार्यालय, उद्योग के भवनों, बगीचों, इत्यादि की सजावट हेतु उपयुक्त है। यह वातावरण में प्रदूषण को कम करने के साथ मनुष्य की थकान को भी कम करते हैं। इसके अलावा मौसमी फूलों की खपत राष्ट्रीय एवं अन्तराष्ट्रीय हवाई अड्डों तथा बहुमंजली मकानों की बाल्कनियों को सजाने में भी बढ़ती जा रही है। कुछ मौसमी फूलों का उपयोग औषधीय तौर पर किया जा रहा है। मौसमी पुष्पों को उगाने के मौसम के आधार पर मुख्य तीन वर्गों जैसे में ग्रीष्म, वर्षा एवं शीत ऋतु के मौसमी फूलों में विभाजित किया गया है।

मौसमी फूलों में बीज उत्पादन विज्ञान, धैर्य और देखभाल का एक आकर्षक मिश्रण है। वार्षिक खेती में बीज उत्पादन एक महत्वपूर्ण अभ्यास है जो उच्च गुणवत्ता वाले बीजों की निरंतर आपूर्ति सुनिश्चित करता है। आनुवंशिक अखंडता को बनाए रखने, फूलों के प्रदर्शन को बढ़ाने और मौसमी फूलों के उच्च गुणवत्ता वाले बीजों के बड़े पैमाने पर उत्पादन के लिए विश्वसनीय बीज उत्पादन विधियां महत्वपूर्ण हैं। संकरण और खुले परागण विधि से बीज उत्पादन को एक लाभदायक व्यावसायिक उद्यम माना जाता है। भारत में फूलों के बीज उत्पादन के मुख्य क्षेत्र पंजाब, हरियाणा, कर्नाटक, हिमाचल प्रदेश, जम्मू और कश्मीर और पश्चिम बंगाल हैं।

ग्रीष्म ऋतु के मौसमी फूलों की व्यावसायिक खेती

इस ऋतु के मौसमी पुष्प में गर्म वातावरण में पुष्पन होता है। इसकी नर्सरी में बीज की बुवाई फरवरी के प्रथम सप्ताह या मार्च के अन्तिम सप्ताह में की जाती है तथा नर्सरी से पौधों को क्यारियों में मार्च के अंतिम सप्ताह या अप्रैल के पहले सप्ताह में रोपण की जाती है। इस वर्ग में कोचीया, जीनिया, गैलार्डिया, टिथोनिया, गेंदा कोरिआप्सिस, सूर्यमुखी, इत्यादि हैं।

बरसात ऋतु के मौसम में वातावरण में अधिक आर्द्रता के साथ गर्मी में पुष्पन होता है। इसका पौधे तैयार करने के लिए नर्सरी में बीज की बुवाई मई से जून तथा पौधा रोपण जून से जुलाई माह में क्यारियों या गमलों में किया जाता है। इस समूह में चैलाई, सेलोसिया, टोरेनिया, गोमफ्रीना, बालसम, इत्यादि आते हैं।

उपयोग के आधार पर ग्रीष्म ऋतु वाले मौसमी पुष्पों का वर्गीकरण

ग्रीष्मकालीन मौसमी पुष्पों को सुन्दरीकरण हेतु विभिन्न प्रकार से उगाया जा सकता है। पौधों को उचित अनुपात में लगाना चाहिये, जिससे मनोहारी दृश्य उत्पन्न हो सके।

मौसमी पुष्पों को विभिन्न स्थानों पर उगाना	मौसमी पुष्पों का नाम
क्यारियों में रोपण हेतु	जीनिया, गेंदा, गोम्फ्रेना, गैलार्डिया, कोरिओप्सिस, पॉरचुलाका, कॉसमॉस
लटकती गमलों या टोकरियों के लिए	पॉरचुलाका, ड्वार्फ जीनिया
गमलों के लिए	गेंदा, गोमफ्रीना, कोचिया
खुले फूलों हेतु	गेंदा, गोमफ्रीना, गैलार्डिया,
कर्तित पुष्प हेतु	सूरजमुखी
ग्रीन फीलर के लिए	कोचिया
पत्थरीली उद्यान हेतु	पॉरचुलाका
माला हेतु	जीनिया, गेंदा, गैलार्डिया
किनारी के लिए	पॉरचुलाका, ड्वार्फ गेंदा
शीघ्र पुष्पन हेतु	पॉरचुलाका, जीनिया, कॉस्मॉस, गेंदा, सूरजमुखी
स्क्रीनिंग के लिए	कोचिया, टिथोनिया

विभिन्न रंगों के ग्रीष्मकालीन पुष्पों का विवरण

अलंकृत उद्यान में रंगों का विशेष महत्त्व है। रंगों के उचित प्रयोग से उद्यान में आलौकिक छटा उत्पन्न की जा सकती है। चमकीले रंगों के साथ हल्के रंग वाले फूल व सुन्दर पत्तियों वाले विभिन्न रंगों के फूलों का विवरण निम्नानुसार है-

नीले रंग के फूल: सालविया, आदि।

लाल रंग के फूल: सालविया, गोम्फ्रेना, बालसम, ऐमरैन्थस, पॉरचुलाका, आदि।

पीले रंग के फूल: गेंदा, गेलार्डिया, कॉस्मॉस, सूरजमुखी, पॉरचुलाका, आदि।

नारंगी रंग के फूल: गेंदा, बालसम, टिथोनिया, गैलार्डिया, पॉरचुलाका, आदि।

बैंगनी रंग के फूल: कॉस्मॉस, बालसम, सालविया, पॉरचुलाका, गोम्फ्रेना, आदि।

सफेद रंग के फूल: कॉस्मॉस, बालसम, पॉरचुलाका, आदि।

ग्रीष्म ऋतु वाले मौसमी पुष्पों की तालिका

बोने का समय: मैदानी क्षेत्र- फरवरी से मार्च

पुष्पन का समय: मैदानी क्षेत्र – मई से जुलाई

फूल का नाम	बोने की विधि	ऊँचाई (से. मी.)
कोरिओप्सिस	बीज एवं रोपण	25-90
कॉसमॉस	बीज	90-150
गैलार्डिया	रोपण	30-60
गोम्फ्रेना	बीज	40-55
कोचिया	बीज	60-75
गेंदा	रोपण एवं कलम	50-70
पॉरचुलाका	बीज एवं रोपण	20-30
सूरजमुखी	बीज	60-150
टिथोनिया	बीज	70-150
जीनिया	बीज एवं रोपण	75-90

ग्रीष्म ऋतु वाले मौसमी फूलों को उगाने की तकनीक

प्रवर्धन

ग्रीष्म ऋतु वाले मौसमी पौधों में अधिकांश पौधों की नर्सरी में बीज की बुवाई तकनीक से पौध तैयार की जाती है। जब नर्सरी में पौधे 4 से 6 सप्ताह के हो जाते हैं तो उन पौधों का क्यारियों या गमलों में रोपण कर दिया जाता है।

पौधशाला/ नर्सरी

ग्रीष्म ऋतु वाले मौसमी पौधों के बीजों को फरवरी से मार्च के माह में बोया जाता है। मौसमी पुष्पों के बीज सामान्य तौर पर छोटे होते हैं इसलिए इनकी बुवाई सघन की जाती है। नर्सरी में क्यारियां बनाने से पहले बलुई दोमट मिट्टी की अच्छी तरह गुड़ाई करके, खरपतवार रहित कर लेते हैं। यदि मिट्टी में बालू एवं जीवांश पदार्थ की मात्रा कम लगे तो नदी का बालू एवं गोबर की सड़ी खाद या वर्मी कम्पोस्ट नर्सरी की मिट्टी में अच्छी तरह 8-10 से. मी. गहराई तक मिला देना चाहिए। जब नर्सरी की मिट्टी भुरभुरी बन जाए तथा उसे 4 मीटर लम्बी 60 से 80 से. मी. चौड़ी तथा दो क्यारी के बीच 1 फुट का रास्ता छोडकर, बनाना चाहिए । क्यारियों को 0.2 प्रतिशत कैप्टान के घोल से उपचार करना चाहिए। मौसमी फूलों के बीजों को क्यारियों में बुवाई से पहले बाविस्टीन पाउडर से उपचारित करना चाहिए। नर्सरी में बनाई गई क्यारियों में मौसमी फूलों की बीज की बुवाई पंक्तियों में 1 से 2 से.मी. गहरा तथा दो पक्तियों में 5-6 से. मी. का फासला रखते हुए करनी चाहिए। नर्सरी में क्यारियों को सुबह एवं सायंकाल सिंचाई करनी चाहिए। समय-समय पर क्यारियों से खरपतवार निकालते रहना चाहिए इस प्रकार 4 से 6 सप्ताह में पौधे रोपाई के लिए तैयार हो जाते हैं।

पौध प्रतिरोपण

जब पौध में तीन-चार पत्तियाँ आ जाती हैं, वह प्रतिरोपण की सही अवस्था होती है। प्रतिरोपण से दो-तीन दिन पहले से पौधशाला की क्यारियों की सिंचाई बन्द कर देनी चाहिये ताकि पौध दृढ़ हो सके। मौसमी फूलों के पौधों को नर्सरी से क्यारियों या गमलों में सायंकाल रोपण करना अच्छा होता है। पौध प्रतिरोपण के लिये उचित आकार की क्यारियाँ बनाकर उनकी मिट्टी को भली-भाँति खरपतवार रहित एवं महीन व भुरभुरी बना लिया जाना चाहिये। खेत तैयार करते समय भली-भाँति सड़ी हुई बोबर की खाद जो कि पिसी और छनी हुई हो, मिट्टी में मिला देनी चाहिये। विभिन्न मौसमी फूलों का पौध रोपण के लिए पंक्ति से पंक्ति एवं पौधे से पौधे की दूरी 15 × 15 से.मी या 30 × 30 से.मी या 45 × 30 से.मी या 45 × 45 से. मी. रखा जाता है। यह दूरी मौसमी पुष्पों की फसल एवं किस्मों के फैलाव पर निर्भर करता है ।

सिंचाई

ग्रीष्म ऋतु वाले मौसमी पुष्प का पौध सामग्री बहुत ही नाजुक होता है इसलिए पौध रोपण के साथ-साथ क्यारियों का सिंचाई करना चाहिए। सामान्यतौर पर देखा गया है कि मौसमी पुष्पों को 4-5 दिन के अंतराल में सिंचाई करना चाहिए। सिंचाई का पानी खारा नहीं होना चाहिए तथा क्यारियों मे नमी बनी रहनी चाहिए। मौसमी पुष्प के बीज पकने पर सिंचाई बन्द कर देना चाहिए।

खाद एवं उर्वरक

उपजाऊ मिट्टी एवं अच्छी तरह तैयार की गई क्यारियों में मौसमी पुष्पों की वृद्धि एवं विकास अच्छा होता है। क्यारियों को बनाते समय 5-8 किलोग्राम/वर्गमीटर गोबर की सड़ी खाद, 8-10 ग्राम/वर्गमीटर फास्फोरस एवं पोटाश मिट्टी में मिला देना चाहिए।

पौध रोपण 20 से 25 दिन बाद 5-8 ग्राम नत्रजन/वर्गमीटर एवं पुनः 40 से 50 दिन बाद 5-8 ग्राम/वर्गमीटर नत्रजन क्यारियों में फैला देना चाहिए।

शीर्ष नोचन एवं डिस्बडिंग

कुछ ग्रीष्म ऋतु वाले मौसमी फूलों मे पौधों के शीर्ष भाग की बढ़वार बहुत तेज हाने के कारण उन पौधों की शाखाओं की बढवार कम हो जाती है इसलिए इस समूह में आने वाले सभी मौसमी फूलों के पौधों को रोपण के 20-30 दिन बाद शीर्ष भाग को तोड़ देना चाहिए। इस विधि को शीर्ष नोचन कहते हैं। जब शीर्ष भाग पर कलिका बन जाए उसे शीध्र ही तोड़ दिया जाए तो उसे डिस्बडिंग कहते हैं। डिस्बडिंग करने से पौधों की शाखाओं में कलिका की वृद्धि एवं विकास अच्छा होता है।

निराई एवं गुडाई

ग्रीष्म ऋतु वाले मौसमी पुष्पों की क्यारियों या गमलों में निराई-गुडाई इस प्रकार करना चाहिए कि वह खरपतवार रहित हो तथा उसकी मिट्टी भुरभुरी बनी रहे। मौसमी फूलों मे गुड़ाई हल्की करनी चाहिए क्योंकि उसके पौधों की उथली जड़ें होती हैं।

कीट एवं रोकथाम

एफिड़ (माहू): मैलाथियान 1-1.5 मिली लीटर या रोगर 1 मिलीलीटर/प्रतिलीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

कैटरपीलर: मैलाथियान 1-1.5 मिली लीटर या रोगर 1 मिलीलीटर/प्रतिलीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

थिप्स: रोगर या मोनोक्रोटोफास 1.0 मिली लीटर/प्रतिलीटर पानी में घोलकर पौधों पर छिड़काव करना चाहिए।

लाल मकड़ी: डाइकोफोल 1 मिलीलीटर या ओमाइट 0.3 मिली लीटर प्रति लीटर पानी में घोलकर पौधों पर छिड़काव करना चाहिए।

लीफ हापर: रोगर 1 मिलीलीटर/प्रतिलीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए ।

रोग एवं रोकथाम

बोट्राईटिस: पत्तियों पर भूरे रंग का धब्बा पड़ने लगता है तथा पत्तियां बाद में गलने लगती हैं। इसकी रोकथाम के लिए मैन्कोजेब 2.0 ग्राम प्रतिलीटर पानी में घोलकर पौधों पर छिड़काव करना चाहिए।

डैम्पिंग आफ: यह बीमारी नर्सरी में होती है। इस बीमारी में पौधा बहुत ही छोटी अवस्था में जमीन के पास से गल कर मर जाता है। इसकी रोकथाम के लिए नर्सरी की मिट्टी को बीज की बुवाई से पहले अच्छी तरह धूप दिखाना चाहिए। बीज की बुवाई से पहले कार्बेन्डाजिम नामक कवकनाशी से उपचारित करना चाहिए। कार्बेन्डाजिम 1.5 - 2.0 ग्राम प्रतिलीटर पानी में घोलकर फुहार से नर्सरी में ड्रेन्च कर देना चाहिए।

लीफ स्पाट एवं ब्लाइट: लीफ स्पाट में पत्तियों पर छोटे आकार के भूरे धब्बे पड़ जाते हैं। लेकिन पत्तियां नहीं गलती है। इसकी रोकथाम डाईथेन एम45- को 2.0 ग्राम/लीटर पानी में घोलकर पौधों पर छिड़काव करना चाहिए।

पाउडरी मिल्ड्यू: पाउडरी मिल्ड्यू से प्रभावित पौधों की पत्तियों पर सफेद पाउडर जैसा पदार्थ दिखाई देने लगता है। इसकी रोकथाम के लिए कार्बेन्डाजिम 1.5 - 2.0 ग्राम प्रतिलीटर पानी में घोलकर पौधों पर छिड़काव करना चाहिए।

ग्रीष्मकालीन मौसमी फूलों का बीज उत्पादन

मौसमी फूलों की उच्च बीज उपज कई कारकों जैसे बढ़ती परिस्थितियां, परागण प्रबंधन, पोषण और सिंचाई प्रबंधन, इंटर-कल्चरल ऑपरेशन, फसल की अवस्था और विधि और बीज भंडारण पर निर्भर करती है ।

परागण

मौसमी फूलों को उनकी फूल संरचना के आधार पर तीन श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया है जो इस प्रकार हैं:

स्व-परागण वाले फूल: कई पौधों की प्रजातियों में स्व-परागण आम है, जहां फूल ज्यादातर निषेचन के लिए अपने स्वयं के पराग का उपयोग करते हैं। (उदाहरण: बाल्सम,)

ओफ्फेन पर-परागण वाले फूल: उनके परागण का लगभग 5-30% अन्य पौधों से आता है। (उधारण: सैल्विया,)

पर-परागण वाले फूल: 30% से अधिक हवा या कीड़े जैसे बाहरी एजेंटों के माध्यम से अन्य पौधों के पराग पर निर्भर करते हैं। (उदाहरण: ज़िनिया)

फूलों के सफल बीज उत्पादन के लिए,यह जानना आवश्यक है कि क्या विशिष्ट फूल स्वयं, ओफ्फेन पर-परागित या पर-परागित फसल है। बैगिंग करके या एक निश्चित दुरी में उगाकर बीज की शुद्धता को बनाये रखा जा सकता है । कई फूलों को खुले में लगाते है और जब फूल खिलने वाले होते हैं तो उनमें से कुछ को मलमल की थैलियों से ढक दिया जाता है और निचे से ठीक से बांध दिया जाता है ताकि कोई कीट प्रवेश न कर सके। यदि मलमल की थैलियों से ढके पौधे या फूल बीज उत्पन्न करते हैं तो यह स्पष्ट है कि किस्म या प्रजाति स्वयं परागित होती है। यदि बैग में रखे फूलों में बीज नहीं बनते हैं तो यह एक संकेत है कि फूलों को हाथ से परागित किया जाना है। कभी-कभी यह कुछ प्रजातियों या किस्मों पर लागु नहीं होता है।

पर-परागित मौसमी फूलों के शुद्ध बीज उत्पादन के लिए कई विधियाँ अपनायी जाती हैं। सबसे सरल तरीका उन्हें अलग अलग उगाना है । इसका अर्थ है एक ही प्रजाति की दो किस्मों या उपभेदों को एक दूसरे से निश्चित दूरी पर उगाना।

तालिका : फूलों की फसलों के लिए अलगाव की दूरी

स्व-परागित	आफ्न पर-परागित	पर-परागित
कोई दूरी नहीं	50-100 मीटर	1000 मीटर

अवांछनीय पौधो को निकलना

उत्पादित बीज के खेत में खराब किस्म या उन्नत किस्म का निरीक्षण करने के लिए जासूसी नजर होनी चाहिए। उसे फसल की शुरुआत से लेकर पकने तक लगातार निगरानी रखनी चाहिए। ऑफ टाइप को हटाना और नष्ट करना अत्यंत महत्वपूर्ण है। जबकि यदि कोई पौधा ताक़त, रंग या फूल के आकार आदि के मामले में बेहतर गुण प्रदर्शित करता है, तो ऐसे पौधे के बीज को आगे के परीक्षण और उपयोग के लिए संरक्षित किया जाना चाहिए।

बीजों की कटाई एवं भण्डारण

फूटने से पहले फलियों को अलग -अलग काटा जाता है। जबकि कई मामलों में श्रम बचाने के लिए बीज की फसल की दरांती से एकल कटाई की जाती है । काटे गए बीजों को तिरपाल पर छाया के नीचे या हवादार कमरे में एक सप्ताह के लिए फैलाया जाता है,लेकिन प्रतिदिन फेर बदल किया जाता है। बीजों को विभिन्न प्रकार की बीज मशीनों से साफ और छाना जाता है तथा अंत में हल्के बीजों को अलग करने के लिए बीजों को हाथ से चुनकर या टेबल फैन का उपयोग करके साफ किया जाता है। सामान्य रूप से उगाए जाने वाले वार्षिक पौधों की प्रति एकड़ औसत उपज, प्रति ग्राम बीज की संख्या और उनके संग्रह का चरण तालिका में दिया गया है।

तालिका : विभिन्न फूलों के संग्रह का चरण

क्रम संख्या	पौधा	संग्रह का चरण
1.	*सेलोसिया* एसपी.	पौधे को सूखने पर सिरों को इकट्ठा कर लें। सूखने वाले सिरों को बारिश से बचाएं।
2.	*गेलार्डिया पुलचेला* (कंबल फूल)	जब बीज की अधिकतम मात्रा परिपक्व हो जाए औरसूख जाए तो पूरे पौधे को काट लें।
3.	*गोम्फेरेना ग्लोबोसा*	जब सिर सूख जाएं तोबीज अलग-अलग इकट्ठा कर लें।
4.	*कोचिया स्कोपरिया*	जब बीज की अधिकतम मात्रा परिपक्व हो जाए तो पूरे पौधे को काट लें और कपडे पर सुखा लें।
5.	*परचुलाका ग्रैंडिफ़्लोरा*	जब कैप्सूल सूखने लगें तो एकत्र करें।
6.	गेंदा	फूलों के सिरों के सूखने पर उन्हें इकट्ठा कर लें
7.	जीनिया	फूलों के सूखने पर उनके सिरों को काट लें। जब पूरे फूल के सिरे सूख जाएं तो बौनी किस्मों को हटाया जा सकता है।
8.	सालविया	जब बीज की फली सूख जाए तो पूरे पौधे को हटा दें और छाया में सुखा लें।

तालिका : वार्षिक फूलों की बीज उपज और प्रति ग्राम बीज की अनुमानित संख्या

नाम	**किग्रा प्रति एकड़**	**बीज की संख्या प्रति ग्राम (लगभग) (Approx.)**
सेलोसिया प्लुमोसा (लंबा)	150-160	1600
सेलोसिया प्लुमोसा (बौना से मध्यम)	40-50	1900
गेलार्डिया पलचेला	150-200	535
गोम्फेरेना ग्लोबोसा (लंबा)	150-160	359
गोम्फेरेना ग्लोबोसा (बौना)	30-40	359
टैगेट्स इरेक्टा	80-100	350

प्रभावी जलवायु परिवर्तन अनुकूलन हेतु ग्रामीण महिलाओं का नेतृत्व एवं सशक्तिकरण

सिमरन पुंडीर, रवीन्द्र पडारिया, नारायण कुंभारे, मुकुल देव, एवं तनीशा सचदेवा
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

इक्कीसवीं सदी में जब दुनिया खाद्य सुरक्षा, पोषण और जलवायु परिवर्तन जैसी गहन चुनौतियों से जूझ रही है, तब यह सच्चाई और अधिक स्पष्ट हो गई है कि वैश्विक कृषि व्यवस्था की वास्तविक रीढ़ महिलाएँ हैं। खेत से लेकर घर की रसोई तक, बीज बोने से लेकर भोजन परोसने तक, महिलाएँ हर स्तर पर कृषि और खाद्य प्रणालियों को संभालती हैं। फिर भी, विडंबना यह है कि उनके इस अमूल्य योगदान को लंबे समय तक वह पहचान, सम्मान और अधिकार नहीं मिल पाए, जिनकी वे वास्तव में हकदार हैं। खाद्य एवं कृषि संगठन (FAO) के अनुसार वैश्विक स्तर पर कृषि-खाद्य प्रणालियों में लगभग 40 प्रतिशत कामकाजी महिलाओं को रोजगार प्राप्त होता है। महिला किसान आमतौर पर पुरुषों की तुलना में छोटे भूखंडों पर खेती करती हैं। यहां तक कि जब वे समान आकार के खेतों का प्रबंधन करती हैं, तब भी भूमि उत्पादकता में लैंगिक अंतर 24 प्रतिशत होता है। भारत में ग्रामीण महिलाओं की कार्यबल भागीदारी दर 41.8 प्रतिशत है, जो शहरी महिलाओं की भागीदारी दर 35.31 प्रतिशत से काफी अधिक है (सांख्यिकी और कार्यक्रम कार्यान्वयन मंत्रालय, भारत सरकार, 2017)। हालांकि सतत विकास लक्ष्य 5 – "लैंगिक समानता" प्राप्त करने का लक्ष्य है, वित्तीय अस्थिरता, खराब सामाजिक-आर्थिक स्थिति, बेरोजगारी और जलवायु परिवर्तनशीलता जैसे मुद्दे उनकी स्थिति को बुरी तरह प्रभावित करते हैं और उन्हें गरीबी में धकेल देते हैं।

इस असंतुलन को दूर करने की दिशा में एक निर्णायक पहल करते हुए संयुक्त राष्ट्र ने वर्ष 2026 को "अंतर्राष्ट्रीय महिला किसान वर्ष " घोषित किया है। इसका उद्देश्य महिलाओं की उस केंद्रीय भूमिका को वैश्विक मंच पर उजागर करना है, जो वे कृषि उत्पादन, पशु-पालन, प्रसंस्करण, विपणन और व्यापार से लेकर परिवार और समाज के पोषण व आजीविका तक निभाती हैं। महिला किसान केवल अन्न उत्पादक नहीं हैं, बल्कि वे खाद्य सुरक्षा की संरक्षक, पारिवारिक पोषण की आधारशिला और ग्रामीण अर्थव्यवस्था की सशक्त स्तंभ हैं। अंतरराष्ट्रीय महिला किसान वर्ष- 2026 न केवल उनके अदृश्य श्रम को दृश्य बनाएगा, बल्कि लैंगिक असमानताओं को कम करने, संसाधनों तक महिलाओं की पहुँच बढ़ाने और उनके जीवन व आजीविका में ठोस सुधार लाने के लिए वैश्विक और राष्ट्रीय स्तर पर ठोस कार्यवाही को भी प्रेरित करेगा।

इसी पृष्ठभूमि में "जलवायु परिवर्तन के युग में भारतीय खेती" का संदर्भ और अधिक प्रासंगिक हो जाता है। बढ़ता तापमान, अनियमित वर्षा, सूखा, बाढ़, चक्रवात और भूमि क्षरण जैसे कारक आज कृषि आधारित आजीविका को सीधे प्रभावित कर रहे हैं। भारत जैसे कृषि प्रधान देश में, जहाँ आज भी बड़ी आबादी प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भर है, जलवायु परिवर्तन का प्रभाव केवल पर्यावरणीय नहीं बल्कि सामाजिक और आर्थिक भी है।

इस पूरे परिदृश्य में यदि किसी वर्ग पर जलवायु परिवर्तन का प्रभाव सबसे अधिक पड़ा है, तो वह हैं ग्रामीण महिलाएँ। खेती, पशुपालन, जल संग्रहण, ईंधन और चारे की व्यवस्था, खाद्य सुरक्षा और पारिवारिक पोषण—इन सभी क्षेत्रों में महिलाएँ केन्द्रीय भूमिका निभाती हैं। इसके बावजूद, लंबे समय तक उन्हें निर्णय-निर्माण और नेतृत्व की प्रक्रियाओं से दूर रखा गया।

आज जब खेती को केवल जलवायु-संवेदनशील नहीं, बल्कि जलवायु-सहिष्णु (Climate Resilient) बनाने की आवश्यकता है, तब यह स्पष्ट होता जा रहा है कि महिलाओं का नेतृत्व इस परिवर्तन की कुंजी हो सकता है। भारत जैसे देश के लिए अंतरराष्ट्रीय महिला किसान वर्ष 2026 केवल सम्मान का वर्ष नहीं, बल्कि महिला किसानों को नीति, संसाधन और नेतृत्व के केंद्र में लाकर एक अधिक न्यायसंगत, टिकाऊ और समावेशी कृषि भविष्य गढ़ने का ऐतिहासिक अवसर है।

खेती में महिलाओं की भूमिका: अदृश्य योगदान से निर्णायक भागीदारी तक

भारतीय कृषि में महिलाओं का योगदान बहुआयामी है। बीज संरक्षण से लेकर कटाई तक, पशुपालन से लेकर घरेलू खाद्य प्रबंधन तक, महिलाओं की भूमिका निरंतर बनी रहती है। इसके बावजूद, उनकी मेहनत अक्सर "परिवार की सहायता" के रूप में देखी जाती है, न कि एक स्वतंत्र आर्थिक योगदान के रूप में। जलवायु परिवर्तन ने इस असमानता को और उजागर किया है।

"जब वर्षा असफल होती है, तो पानी लाने की दूरी बढ़ जाती है। जब जंगल सूखते हैं, तो ईंधन और चारे की खोज कठिन हो जाती है। जब फसलें नष्ट होती हैं, तो भोजन की जिम्मेदारी महिलाओं पर ही आती है।" इन परिस्थितियों में महिलाएँ केवल संकट झेलने वाली नहीं हैं, बल्कि स्थानीय ज्ञान, अनुभव और सामुदायिक समझ के आधार पर समाधान भी गढ़ रही हैं। यही वह बिंदु है जहाँ महिला नेतृत्व की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाती है।

स्वयं सहायता समूह: महिला नेतृत्व का सशक्त मंच

ग्रामीण भारत में स्वयं सहायता समूहों ने महिलाओं के जीवन में एक मौन लेकिन गहरा परिवर्तन किया है। प्रारंभ में ये समूह बचत और ऋण तक सीमित थे, लेकिन समय के साथ ये सामाजिक सशक्तिकरण, सामूहिक निर्णय-निर्माण, नेतृत्व विकास, प्रशिक्षण और विस्तार सेवाओं की पहुँच के प्रभावी मंच बन गए। ग्रामीण महिलाओं की जलवायु परिवर्तन से जुड़ी संवेदनशीलताओं तथा उनके अनुकूलन व्यवहारों को समझने के उद्देश्य से "जलवायु परिवर्तन अनुकूलन और सतत आजीविका में ग्रामीण महिलाओं का नेतृत्व" विषय पर उत्तराखंड राज्य में अध्ययन किया। इस अध्ययन में कुल 200 महिला कृषकों को शामिल किया गया, जिनमें 100 महिलाएँ स्वयं सहायता समूहों से जुड़ी थीं, जबकि 100 महिलाएँ ऐसे किसी नेतृत्व प्रभाव से नहीं जुड़ी थीं। अध्ययन से यह स्पष्ट रूप से सामने आया कि स्वयं सहायता समूहों से जुड़ी महिलाएँ नेतृत्व के विभिन्न आयामों में अधिक सक्षम थीं तथा इनमें निर्णय लेने की क्षमता, प्रभावी संवाद कौशल, टीम निर्माण, नैतिक आचरण तथा भविष्य की योजना बनाने की दृष्टि विशेष रूप से विकसित थी। इन गुणों ने महिलाओं को न केवल जलवायु परिवर्तन की चुनौतियों को बेहतर ढंग से समझने में सहायता की, बल्कि उनसे निपटने के लिए सामूहिक और प्रभावी अनुकूलन रणनीतियाँ अपनाने में भी सक्षम बनाया। स्वयं सहायता समूहों की नियमित बैठकों, सामूहिक गतिविधियों और प्रशिक्षण कार्यक्रमों ने महिलाओं को न केवल बोलने का अवसर दिया, बल्कि नेतृत्व का अभ्यास करने का आत्म-विश्वास भी दिया।

पहाड़ी खेती और कृषक महिला नेतृत्व : उत्तराखंड का अनुभव:

हिमालयी क्षेत्र विशेषकर उत्तराखंड जलवायु परिवर्तन के प्रति अत्यंत संवेदनशील है।

यहाँ हिमनदों का पिघलना, अनियमित मानसून, भूस्खलन और वनों का क्षरण खेती और आजीविका दोनों को प्रभावित कर रहे हैं। इन परिस्थितियों में ग्रामीण महिलाएँ खेती और संसाधन प्रबंधन की रीढ़ बनकर उभरी हैं। अध्ययन से यह सामने आया कि जिन महिलाओं में नेतृत्व क्षमता अधिक थी, वे जलवायु परिवर्तन के प्रभावों से निपटने के लिए अधिक सक्रिय और संगठित थीं।

महिलाओं द्वारा अपनाई गई जलवायु अनुकूलन रणनीतियाँ

1. वन प्रबंधन: प्रकृति के साथ सह-अस्तित्व

महिलाएँ वनों को केवल ईंधन या चारे का स्रोत नहीं मानतीं, बल्कि उन्हें जीवनदायिनी व्यवस्था के रूप में देखती हैं। नेतृत्व क्षमता वाली महिलाएँ वृक्षारोपण, सामुदायिक वन संरक्षण, अवैध कटाई की रोकथाम और पारंपरिक वन ज्ञान के संरक्षण जैसी गतिविधियों में अग्रणी भूमिका निभा रही हैं। साथ ही, पारंपरिक भंडारण प्रथाएँ स्थानीय किसानों की सूझ-बूझ और अनुकूलन क्षमता को दर्शाती हैं। किसान मक्का, लहसुन और मिर्च के बीज को छतों या भंडारण कक्षों में रस्सियों पर लटकाकर सुरक्षित रखते हैं, जिससे वेंटिलेशन बना रहता है और नमी व कीटों से सुरक्षा मिलती है। कोठार जैसी लकड़ी की संरचना दीर्घकालीन अनाज भंडारण और कीट व सूक्ष्मजीव से संरक्षण सुनिश्चित करती है। इसके अलावा, पराल प्रणाली में सूखी घास को वृक्ष तनों के चारों ओर बांधकर अतिरिक्त नमी निकालती है और चारा जानवरों से सुरक्षित रहता है, जिससे सूखे और वर्षा के मौसम में विश्वसनीय चारे की उपलब्धता बनी रहती है। ये प्रथाएँ पारंपरिक ज्ञान के माध्यम से सतत खाद्य और चारे की सुरक्षा सुनिश्चित करती हैं और जलवायु परिवर्तन के प्रति ग्रामीण समुदायों की लचीलापन क्षमता को दर्शाती हैं। उनके इन प्रयासों को राष्ट्रीय वनीकरण कार्यक्रम, संयुक्त वन प्रबंधन और ग्रीन इंडिया मिशन जैसी सरकारी पहलों से संस्थागत समर्थन मिल रहा है। "प्रतिकरात्मक वनरोपण निधि (Compensatory Afforestation Fund) के माध्यम से क्षतिपूरक वनीकरण को बढ़ावा दिया जा रहा है, जबकि मनरेगा (MGNREGA) कार्यक्रम के अंतर्गत वृक्षारोपण और भूमि सुधार कार्यों ने ग्रामीण महिलाओं की भागीदारी को और मजबूत किया है। इन समन्वित प्रयासों से न केवल जैव विविधता सुरक्षित रहती है, बल्कि जलवायु संतुलन बनाए रखने में भी मदद मिलती है।

2. जलागम प्रबंधन: जल के हर बूंद का संरक्षण

जल की कमी जलवायु परिवर्तन की सबसे गंभीर चुनौती है। महिलाओं के नेतृत्व में वर्षा जल संचयन, धारा, नाउला और भोर जैसी परंपरागत जल संचयन प्रणालियों का पुनर्जीवन, जल स्रोतों की सफाई, सामुदायिक जल उपयोग नियम और मृदा नमी संरक्षण जैसे उपाय अपनाए जा रहे हैं।

इन पहलों को प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना के जलागम विकास घटक, जल जीवन मिशन और अटल भूजल योजना से

तकनीकी व वित्तीय समर्थन प्राप्त हो रहा है। राष्ट्रीय जलागम विकास कार्यक्रम और मनरेगा (MGNREGA) कार्यक्रम के अंतर्गत निर्मित जल संरक्षण संरचनाओं ने भी इन प्रयासों को गति दी है। परिणामस्वरूप सूखे की स्थिति में भी खेती और घरेलू उपयोग के लिए जल की उपलब्धता बनी रहती है।

3. मृदा संरक्षण और सतत् कृषि

महिलाएँ खेती को केवल उत्पादन की प्रक्रिया नहीं बल्कि संरक्षण और सततता से जुड़ी एक समग्र जिम्मेदारी के रूप में देखती हैं और सीढ़ीदार खेती, बारहनाजा, जैविक खाद, फसल विविधीकरण तथा मिश्रित खेती जैसी पद्धतियाँ अपनाकर मृदा की उर्वरता और जल धारण क्षमता बनाए रखती हैं, जिससे खेती अधिक टिकाऊ बनती है। साथ ही, कीट प्रकोप जैसी पहाड़ी कृषि की प्रमुख चुनौती का समाधान भी महिलाओं के नेतृत्व में पारंपरिक एवं पर्यावरण-अनुकूल तकनीकों द्वारा किया जा रहा है, जैसे दीमक नियंत्रण हेतु गुड़-मटका विधि, धान में जड़ खाने वाले कीटों के लिए बांसा के पत्तों-तनों का प्रयोग, भंडारित अनाज की सुरक्षा हेतु नमक-लेपित नीम पत्तियों का उपयोग तथा चूहों के नियंत्रण के लिए खिंडा और कंडाली का सहारा। ये स्वदेशी पद्धतियाँ रासायनिक कीटनाशकों पर निर्भरता घटाकर कृषि को अधिक टिकाऊ और जलवायु-सहिष्णु बनाती हैं। परंपरागत कृषि विकास योजना के अंतर्गत जैविक खेती को बढ़ावा, राष्ट्रीय सतत कृषि मिशन एवं राष्ट्रीय कृषि विकास योजना द्वारा जलवायु-सहिष्णु तकनीकों का प्रसार, तथा मृदा स्वास्थ्य कार्ड योजना के माध्यम से मृदा परीक्षण जैसी सुविधाओं ने इन प्रयासों को और प्रभावी बनाया है। हाल ही में प्रारंभ किए गए राष्ट्रीय प्राकृतिक खेती मिशन ने भी महिलाओं को प्राकृतिक खेती की ओर प्रेरित किया है, जिससे खेती जलवायु परिवर्तन के प्रति अधिक सहनशील बनती जा रही है। इसी संदर्भ में बारहनाजा (Barah Anaja) मिश्रित खेती प्रणाली उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्रों में प्रचलित एक वैज्ञानिक आधार वाली पारंपरिक कृषि पद्धति है, जिसमें एक ही खेत में बारह प्रकार की फसलें साथ-साथ उगाई जाती हैं। खरीफ मौसम में मंडुवा, झंगोरा, कौणी, उड़द, मूंग, तिल, लोबिया, चौलाई एवं भट्ट तथा रबी मौसम में गेहूं, जौ, चना, मटर, मसूर, सरसों और जख्या जैसी फसलों की खेती खाद्य सुरक्षा, मिट्टी संरक्षण और जलवायु अनुकूलन का उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत करती है। इस प्रणाली में दलहनी फसलें नाइट्रोजन स्थिरीकरण द्वारा मिट्टी की उर्वरता बढ़ाती हैं, फसलों की विविधता कीट एवं रोग प्रकोप को स्वाभाविक रूप से कम करती है, तथा कम जल में उत्पादन संभव होने से यह वर्षा आधारित खेती के लिए अत्यंत उपयुक्त सिद्ध होती है। साथ ही यह मृदा अपरदन को रोककर रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता घटाती है और किसानों की आय व पोषण सुरक्षा सुनिश्चित करती है। इस प्रकार, महिलाओं की सक्रिय भागीदारी से जुड़ी बारहनाजा प्रणाली उत्तराखण्ड की जलवायु-संवेदनशील कृषि का एक सशक्त और प्रेरणादायी पारंपरिक समाधान बनकर उभरती है।

4. सामुदायिक सहभागिता: अकेले नहीं, मिलकर समाधान

अध्ययन में यह पाया गया कि एक अच्छी महिला प्रमुख केवल नेतृत्वकर्ता नहीं होती, बल्कि वह समुदाय को जोड़ने, लोगों को प्रेरित करने और सामूहिक प्रयासों को संगठित करने में भी सक्षम होती है। राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन के अंतर्गत गठित स्वयं सहायता समूहों और महिला किसान सशक्तिकरण परियोजना ने महिलाओं को संगठित मंच प्रदान किया है, जहाँ वे जलवायु जागरूकता कार्यक्रम, सामूहिक योजना निर्माण और संसाधनों के साझा उपयोग को बढ़ावा देती हैं। DAY-NRLM की जलवायु-सहिष्णु कृषि पहलों, SHG नेटवर्क और किसान उत्पादक संगठनों (FPOs) के माध्यम से महिलाओं की सामूहिक शक्ति और निर्णय क्षमता सुदृढ़ हुई है। इससे समुदाय की सामूहिक सहनशीलता लगातार बढ़ रही है।

5. आपदा तैयारी और जोखिम न्यूनीकरण

आपदाएँ अचानक आती हैं, लेकिन महिलाओं के नेतृत्व में की गई तैयारी से नुकसान को काफी हद तक कम किया जा सकता है। राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन प्राधिकरण के मार्गदर्शन में पूर्व चेतावनी प्रणालियाँ, आपदा अभ्यास और सुरक्षित निकासी योजनाएँ विकसित की गई हैं। राज्य और राष्ट्रीय आपदा मोचन निधियों ने त्वरित राहत और पुनर्वास में सहायता प्रदान की है। प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना ने जलवायु जोखिम से प्रभावित किसानों को आर्थिक सुरक्षा दी है, जबकि जलवायु परिवर्तन पर राष्ट्रीय कार्य योजना और आपदा जोखिम न्यूनीकरण कार्यक्रमों ने दीर्घकालिक अनुकूलन रणनीतियों को मजबूती दी है। इन प्रयासों से जान-माल की हानि में उल्लेखनीय कमी आई है।

नेतृत्व क्यों बनाता है अंतर?

अध्ययन से यह स्पष्ट हुआ कि नेतृत्व केवल व्यक्तिगत गुण नहीं, बल्कि एक सामाजिक प्रक्रिया है। नेतृत्व क्षमता वाली महिलाएँ अधिक आत्मविश्वासी होती हैं, जोखिमों को समझकर निर्णय लेती हैं, प्रशिक्षण और नवाचार को अपनाती हैं और दूसरों को प्रेरित करती हैं। यही कारण है कि वे जलवायु अनुकूलन की अधिक रणनीतियाँ अपनाती हैं और समुदाय को भी साथ लेकर चलती हैं।

नीतिगत संदेश: महिलाओं को केंद्र में लाना अनिवार्य

यह शोध एक स्पष्ट नीति-संदेश देता है— **जलवायु परिवर्तन से निपटने के लिए महिलाओं को केवल लाभार्थी**

प्रशिक्षण को विस्तार दिया जाए, महिला-केंद्रित विस्तार सेवाएँ सुदृढ़ हों, प्रशिक्षण, संसाधन और मूलभूत संरचना तक महिलाओं की पहुँच बढ़े, और जलवायु योजनाओं में लैंगिक दृष्टिकोण को अनिवार्य रूप से शामिल किया जाए।

पहाड़ी क्षेत्रों में जलवायु परिवर्तन के लिए महिलाओं को सशक्त बनाने हेतु कार्य-योजनाएँ

1. क्षमता निर्माण एवं जलवायु नेतृत्व प्रशिक्षण

महिलाओं को जलवायु परिवर्तन, अनुकूलन रणनीतियों, और सामुदायिक योजना पर प्रशिक्षित किया जाए ताकि वे स्थानीय स्तर पर जलवायु कार्यों का नेतृत्व कर सकें।

2. निर्णय-निर्माण एवं शासन में महिलाओं की भागीदारी

ग्राम पंचायत, जल प्रबंधन समितियों और वन प्रबंधन संस्थाओं में महिलाओं की सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित की जानी चाहिए ताकि संसाधनों का बेहतर प्रबंधन हो सके और सतत विकास को बढ़ावा मिले।

3. जलवायु-स्मार्ट एवं प्रकृति आधारित आजीविका को बढ़ावा

महिलाओं को जलवायु-स्मार्ट कृषि, कृषि वानिकी, बागवानी एवं हस्तशिल्प जैसे कार्यों से जोड़ा जाए, जिससे आय और पर्यावरण संरक्षण दोनों सुनिश्चित हों।

4. महिला समूहों और सहकारी संस्थाओं को सशक्त बनाना

स्वयं सहायता समूहों और महिला सहकारिताओं के माध्यम से सामूहिक संसाधन प्रबंधन, विपणन और ज्ञान साझा करने को बढ़ावा दिया जाए।

5. कौशल विकास एवं वित्तीय समावेशन

महिलाओं को ऋण, बीमा, प्रशिक्षण और जलवायु-सहिष्णु तकनीकों तक पहुँच उपलब्ध कराई जाए, ताकि वे जोखिमों से सुरक्षित रह सकें।

6. लैंगिक संवेदनशील जलवायु नीति एवं योजना

स्थानीय जलवायु योजनाओं में महिलाओं की जरूरतों और भूमिकाओं को शामिल किया जाए तथा उनके लिए विशेष बजट और लक्ष्य निर्धारित हों।

7. सूचना एवं पूर्व चेतावनी प्रणालियों तक पहुँच

महिलाओं को मौसम पूर्वानुमान, आपदा चेतावनी और डिजिटल जलवायु सेवाओं से जोड़ा जाए, जिससे वे खेती और संसाधन प्रबंधन के बेहतर निर्णय ले सकें।

ये कार्ययोजनाएँ महिलाओं के नेतृत्व को मजबूत करती हैं, आजीविका को सुरक्षित बनाती हैं और पहाड़ी क्षेत्रों में सतत जलवायु अनुकूलन को बढ़ावा देती हैं।

निष्कर्ष: सशक्त महिलाएँ जलवायु-सहिष्णु कृषि का आधार

ग्रामीण महिलाएँ जलवायु परिवर्तन की केवल पीड़ित नहीं हैं, बल्कि वे इसके समाधान की सबसे सशक्त कड़ी भी हैं। जब महिलाओं को नेतृत्व, प्रशिक्षण और निर्णय-निर्माण में सक्रिय भागीदारी का अवसर मिलता है, तो वे खेती को अधिक टिकाऊ, संसाधन-संरक्षणशील और जलवायु-सहिष्णु बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। स्वयं सहायता समूहों के माध्यम से विकसित नेतृत्व क्षमता महिलाओं को न केवल कृषि कार्यों में दक्ष बनाती है, बल्कि सामुदायिक संसाधन प्रबंधन, आपदा तैयारी और सामूहिक निर्णय-निर्माण में भी उन्हें सशक्त करती है। ऐसे समूहों से उभरता महिला नेतृत्व यह स्पष्ट संकेत देता है कि जलवायु परिवर्तन से निपटने की किसी भी रणनीति में महिलाओं को केंद्रीय स्थान देना अनिवार्य है। अतः कृषि विस्तार सेवाओं, जलवायु अनुकूलन कार्यक्रमों और ग्रामीण विकास नीतियों में महिलाओं को केवल लाभार्थी के रूप में नहीं, बल्कि नीति-निर्माण और क्रियान्वयन की सक्रिय भागीदार के रूप में स्थापित करना समय की आवश्यकता है। वास्तव में, सुरक्षित कृषि भविष्य और सतत ग्रामीण विकास की आधारशिला सशक्त महिला नेतृत्व पर ही टिकी है।

ऑयस्टर मशरूम खेती: ग्रामीण महिलाओं के स्थायी आजीविका और सशक्तिकरण का बेहतरीन साधन

सुष्मिता सैनी[1,2*], एम.जे. चंद्र गौड़ा[2] एवं स्मृति रंजन पधान[1]

[1] भा.कृ.अ.प-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

[2] भा.कृ.अ.प.-कृषि प्रौद्योगिकी अनुप्रयोग अनुसंधान संस्थान, बेंगलुरु

ग्रामीण भारत में महिलाओं की आजीविका सीमित भूमि, पूंजी और अवसरों के कारण अनेक चुनौतियों से घिरी हुई है। ऐसे में मशरूम खेती एक ऐसा नवाचारी और व्यावहारिक विकल्प बनकर उभरी है, जो कम भूमि, कम जल और न्यूनतम निवेश में नियमित आय उपलब्ध कराकर महिलाओं के आर्थिक सशक्तिकरण का मार्ग प्रशस्त करती है। प्रस्तुत लेख में कर्नाटक के तुमकुरु जिले की एक भूमिहीन महिला उद्यमी द्वारा संचालित ऑयस्टर मशरूम उत्पादन इकाई के सफल अनुभवों के माध्यम से यह दर्शाया गया है कि किस प्रकार वैज्ञानिक प्रशिक्षण, संस्थागत सहयोग और आत्मविश्वास के बल पर ग्रामीण महिलाएँ आत्मनिर्भर बन सकती हैं। यह लेख मशरूम उत्पादन की तकनीकी प्रक्रिया, लागत संरचना, उत्पादन प्रणाली, विपणन रणनीतियों, संस्थागत समर्थन तथा वित्तीय और प्रबंधन संबंधी चुनौतियों का सरल एवं लोकप्रिय शैली में विश्लेषण प्रस्तुत करता है। साथ ही यह स्पष्ट करता है कि मशरूम खेती न केवल ग्रामीण महिलाओं को स्थायी आजीविका प्रदान करती है, बल्कि पोषण सुरक्षा, सामाजिक सम्मान और नेतृत्व क्षमता के विकास में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। अंतरराष्ट्रीय महिला किसान वर्ष 2026 के संदर्भ में यह लेख नीति निर्माताओं, विकास संगठनों और कृषि विस्तार तंत्र के लिए महिलाओं की भागीदारी बढ़ाने हेतु एक प्रेरणादायक मॉडल प्रस्तुत करता है।

मुख्य शब्द: मशरूम खेती, ग्रामीण महिला सशक्तिकरण, स्थायी आजीविका

भारत में ग्रामीण महिलाओं की आजीविका परंपरागत रूप से कृषि, पशुपालन, वनोपज संग्रह और घरेलू कुटीर उद्योगों पर आधारित रही है। किंतु भूमि स्वामित्व की कमी, सीमित पूंजी, तकनीकी जानकारी का अभाव और सामाजिक बाधाएँ उनके आर्थिक सशक्तिकरण में प्रमुख अवरोध बनती रही हैं। ऐसे परिदृश्य में मशरूम उत्पादन एक ऐसा विकल्प बनकर उभरा है, जो कम भूमि, कम जल, कम निवेश और कम समय में बेहतर आय प्रदान कर सकता है। विशेष रूप से ऑयस्टर मशरूम की खेती ग्रामीण महिलाओं, भूमिहीन परिवारों और छोटे उद्यमियों के लिए आजीविका का एक प्रभावी साधन सिद्ध हो रही है। कर्नाटक के तुमकुरु ज़िले के करकरे गाँव की सुश्री रेणुका देवी आर द्वारा संचालित "रेणुप्रीथम मशरूम फार्म" इस बात का उत्कृष्ट उदाहरण है कि कैसे एक भूमिहीन महिला ने सीमित संसाधनों के बावजूद अपने परिश्रम, लगन और तकनीकी ज्ञान के बल पर एक सफल आजीविका उद्यम खड़ा किया। यह लेख उनकी प्रेरणादायक यात्रा, उत्पादन प्रणाली, लागत संरचना, विपणन रणनीति, संस्थागत सहयोग, चुनौतियों और संभावनाओं को सरल व लोकप्रिय शैली में प्रस्तुत करता है।

मशरूम उत्पादन: महिलाओं के लिए उपयुक्त क्यों है?

मशरूम उत्पादन की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसके लिए न तो बड़े खेत की आवश्यकता होती है और न ही अधिक पानी की। यह कृषि अपशिष्टों जैसे धान का पुआल, लकड़ी के बुरादे की गोलियां, गेहूँ का भूसा आदि पर आधारित होता है। ऑयस्टर मशरूम 20–25 दिनों के छोटे चक्र में तैयार हो जाती है, जिससे नियमित नकदी प्रवाह बना रहता है। महिलाओं के लिए यह इसलिए भी उपयुक्त है क्योंक इसे घर के पास या घर के अंदर छोटे स्थान पर किया जा सकता है। श्रम की आवश्यकता अपेक्षाकृत कम होती है। इसमें घरेलू श्रम का बेहतर उपयोग संभव है और पोषण सुरक्षा में भी योगदान मिलता है, क्योंकि मशरूम प्रोटीन, खनिज और विटामिन का अच्छा स्रोत है।

उद्यमी का परिचय: सुश्री रेणुका देवी आर.

सुश्री रेणुका देवी आर, आयु 40 वर्ष, करकरे गाँव, तालुक तुमकुरु, ज़िला तुमकुरु (कर्नाटिक) की निवासी हैं। वे स्नातक शिक्षित हैं और पिछले पाँच वर्षों से ऑयस्टर मशरूम उत्पादन में संलग्न हैं। विशेष बात यह है कि उनके पास स्वयं की कृषि भूमि नहीं है और वे पूरी तरह मशरूम उत्पादन पर आधारित आजीविका से अपने तीन सदस्यीय परिवार का भरण-पोषण करती हैं। प्रारंभ में आर्थिक कठिनाइयों और तकनीकी ज्ञान के अभाव के बावजूद उन्होंने हार नहीं मानी। कृषि विज्ञान केंद्र (केवीके), तुमकुरु द्वारा आयोजित प्रशिक्षण कार्यक्रमों में भाग लेकर उन्होंने मशरूम उत्पादन की वैज्ञानिक विधियों को सीखा। इसके पश्चात उन्होंने इसे अपने जीवन का मुख्य व्यवसाय बना लिया। उनके फार्म पर अपनाई गई आधुनिक उत्पादन व्यवस्था, ग्रो बैग प्रणाली, स्पॉन एवं सब्सट्रेट भंडारण, विकसित होते ऑयस्टर मशरूम फलन तथा फार्म की समग्र संरचना को चित्र 1 में दर्शाया गया है, जो उनके उद्यम की कार्यप्रणाली और प्रबंधन दक्षता को स्पष्ट रूप से प्रतिबिंबित करता है।

चित्र 1: रेणुप्रीथम मशरूम फार्म, तुमकुरु (कर्नाटक) में ऑयस्टर मशरूम उत्पादन की विभिन्न अवस्थाएँ - (क) उत्पादन कक्ष में लटके ग्रो बैग, (ख) स्पॉन एवं सब्सट्रेट भंडारण व्यवस्था, (ग) विकसित होते ऑयस्टर मशरूम फलन, (घ) फार्म का साइनबोर्ड, (ङ) महिला उद्यमी एवं तकनीकी भ्रमण के दौरान अवलोकन।

आधारभूत संरचना और निवेश

सतत उत्पादन सुनिश्चित करने के लिए सुश्री रेणुका देवी ने सीमित संसाधनों के भीतर आवश्यक आधारभूत संरचना विकसित की। उन्होंने स्पॉन बैग भरने के लिए एक कक्ष, डार्क रूम तथा उत्पादन शेड का निर्माण किया। स्पॉन बैग भरने का कक्ष 20 × 20 वर्गफुट का है, जिस पर लगभग 4 लाख रुपये का निवेश हुआ। इसके अतिरिक्त 15 × 12 वर्गफुट का डार्क रूम तथा 25 × 25 वर्गफुट के दो उत्पादन शेड तैयार किए गए। इन संरचनाओं को इस प्रकार डिज़ाइन किया गया कि सीमित स्थान में अधिकतम उत्पादन संभव हो सके।

इनपुट उपयोग और लागत संरचना

मशरूम उत्पादन में नियमित इनपुट की आवश्यकता होती है, जिसमें स्पॉन, सब्सट्रेट, पॉलीबैग, कीटाणुनाशक, पैकेजिंग सामग्री, श्रम और आर्द्रता बनाए रखने के उपकरण शामिल हैं। सुश्री रेणुका देवी प्रतिदिन लगभग 4 किलोग्राम स्पॉन का उपयोग करती हैं, जिसकी औसत लागत 100 रुपये प्रति किलोग्राम है। सब्सट्रेट के रूप में वे लकड़ी के बुरादे की गोलियां का उपयोग करती हैं, जिसकी मात्रा लगभग 500 किलोग्राम प्रति माह है और लागत 7 रुपये प्रति किलोग्राम पड़ती है। वे प्रतिदिन लगभग 40 पॉलीबैग भरती हैं। इसके अतिरिक्त कीटाणुनाशक (फॉर्मेलिन), पैकेजिंग प्लास्टिक बॉक्स और फॉगर सिस्टम पर भी नियमित व्यय होता है। श्रम के लिए एक सहायक को 10,000 रुपये प्रति माह का भुगतान किया जाता है। कुल मिलाकर, यह लागत संरचना यह दर्शाती है कि सीमित निवेश में भी नियमित उत्पादन संभव है।

उत्पादन प्रणाली और प्रतिफल

रेणुप्रीथम मशरूम फार्म की उत्पादन प्रणाली अनुशासित और नियमित है। प्रतिदिन 40 ग्रो बैग भरे जाते हैं, जिससे औसतन 25–30 किलोग्राम ताजे ऑयस्टर मशरूम का उत्पादन होता है। यह उत्पादन स्तर उन्हें प्रतिदिन 5,000 से 6,000 रुपये तक की सकल आय प्रदान करता है, क्योंकि बाजार में मशरूम का औसत मूल्य 180–200 रुपये प्रति किलोग्राम रहता है। इस निरंतर नकदी प्रवाह से उनके परिवार की दैनिक आवश्यकताओं के साथ-साथ बच्चों की शिक्षा, स्वास्थ्य और सामाजिक दायित्वों की पूर्ति संभव हो पाती है।

तालिका: रेणुप्रीथम मशरूम फार्म में लागत, उत्पादन एवं आय का एक विवरण

घटक	विवरण	मात्रा / आकार	अनुमानित लागत / मूल्य
आधारभूत संरचना	स्पॉन बैग भरने का कक्ष	20 × 20 वर्गफुट	लगभग ₹4,00,000 (एकमुश्त)
	डार्क रूम	15 × 12 वर्गफुट	
	उत्पादन शेड (2 इकाई)	25 × 25 वर्गफुट (प्रत्येक)	
प्रमुख उत्पादन सामग्री	स्पॉन	4 किग्रा प्रतिदिन	₹100 प्रति किग्रा
	सब्सट्रेट (लकड़ी के बुरादे की गोलियां)	500 किग्रा प्रति माह	₹7 प्रति किग्रा
	पॉलीबैग	40 बैग प्रतिदिन	परिवर्तनीय खर्च
	कीटाणुनाशक व पैकेजिंग	फॉर्मेलिन, प्लास्टिक बॉक्स आदि	नियमित
	श्रम	एक सहायक	₹10,000 प्रति माह
उत्पादन स्तर	भरे जाने वाले ग्रो बैग	40 बैग प्रतिदिन	–
	ताजा ऑयस्टर मशरूम उत्पादन	25–30 किग्रा प्रतिदिन	–
विपणन एवं आय	बाजार मूल्य	औसत	₹180–200 प्रति किग्रा
	सकल दैनिक आय	–	₹5,000–6,000 प्रतिदिन

विपणन रणनीति और मूल्य प्राप्ति

मशरूम अत्यंत नाशवान उत्पाद है, अतः इसका शीघ्र और प्रभावी विपणन अत्यंत आवश्यक है। सुश्री रेणुका देवी ने इसके लिए बहु-चैनल विपणन रणनीति अपनाई है।

- प्रत्यक्ष उपभोक्ता बिक्री – स्थानीय उपभोक्ताओं को सीधे ताजे मशरूम की बिक्री, जिससे 200 रुपये प्रति किलोग्राम तक का मूल्य प्राप्त होता है।
- स्थानीय खुदरा विक्रेता एवं एग्रीगेटर – लगभग 190 रुपये प्रति किलोग्राम की दर से।
- बेंगलुरु बाजार के व्यापारी – पैक्ड मशरूम की बिक्री, जहाँ औसत मूल्य 180 रुपये प्रति किलोग्राम मिलता है।

यह विविध विपणन चैनल मूल्य जोखिम को कम करते हैं और बाजार की अनिश्चितता से सुरक्षा प्रदान करते हैं।

संस्थागत सहयोग और क्षमता निर्माण

सुश्री रेणुका देवी को कृषि विज्ञान केंद्र, तुमकुरु से तकनीकी प्रशिक्षण प्राप्त हुआ। इसके अंतर्गत उन्होंने मशरूम उत्पादन की वैज्ञानिक विधियाँ, रोग नियंत्रण, स्वच्छता प्रबंधन और विपणन कौशल सीखे। इसके अतिरिक्त, उद्यमिता विकास कार्यक्रम (ईडीपी) के माध्यम से उन्हें ओवन, सीलिंग मशीन और वजन मशीन जैसे आवश्यक उपकरण उपलब्ध कराए गए। इससे उनकी पैकेजिंग गुणवत्ता और विपणन दक्षता में उल्लेखनीय सुधार हुआ।

वित्तीय पहुँच और ऋण संबंधी चुनौतियाँ

वित्तीय संसाधनों की सीमित उपलब्धता उनके उद्यम विस्तार में सबसे बड़ी बाधा रही है। वे स्वयं सहायता समूह (एसएचजी) की सदस्य हैं, जिसके माध्यम से उन्हें 2 लाख रुपये का ऋण प्राप्त हुआ। भूमि स्वामित्व न होने और जमानत की कमी के कारण उन्हें बैंकों से अतिरिक्त ऋण नहीं मिल सका। परिणामस्वरूप उन्हें लगभग 3 लाख रुपये अनौपचारिक स्रोतों जैसे मित्रों और रिश्तेदारों से उधार लेने पड़े। यह स्थिति दर्शाती है कि भूमिहीन महिला उद्यमियों के लिए संस्थागत वित्त तक पहुँच आज भी एक बड़ी चुनौती है।

उत्पादन एवं प्रबंधन संबंधी समस्याएँ

उत्पादन प्रक्रिया में उन्हें कई तकनीकी समस्याओं का सामना करना पड़ा, जैसे: रोग और फफूंद संक्रमण के कारण बैग का खराब होना, धान के पुआल की खराब गुणवत्ता, उत्पादन शेड में अपर्याप्त वायु-संचालन, रोग प्रकोप के समय तकनीकी परामर्श की सीमित उपलब्धता। इन चुनौतियों के बावजूद उन्होंने निरंतर प्रयोग और प्रशिक्षण के माध्यम से अपनी उत्पादन दक्षता को बेहतर बनाया।

मशरूम मूल्य श्रृंखला में भूमिका

रेणुप्रीथम मशरूम फार्म स्थानीय ताजे मशरूम आपूर्ति श्रृंखला में एक महत्वपूर्ण कड़ी है। यह उद्यम बाहरी इनपुट आपूर्तिकर्ताओं से स्पॉन और सब्सट्रेट प्राप्त कर महिला-प्रबंधित उत्पादन एवं प्रसंस्करण करता है तथा स्थानीय और शहरी बाजारों तक उत्पाद पहुँचाता है। यह मॉडल दर्शाता है कि ग्रामीण महिलाएँ मूल्य श्रृंखला के विभिन्न स्तरों पर सक्रिय भूमिका निभा सकती हैं और स्थानीय आर्थिक विकास में योगदान कर सकती हैं।

सामाजिक और आर्थिक प्रभाव

इस उद्यम ने न केवल सुश्री रेणुका देवी के परिवार की आर्थिक स्थिति में सुधार किया, बल्कि उनके सामाजिक सम्मान और आत्मविश्वास को भी बढ़ाया। आज वे अपने गाँव की अन्य महिलाओं के लिए प्रेरणा स्रोत बन चुकी हैं। कई महिलाएँ उनसे प्रशिक्षण लेकर मशरूम उत्पादन प्रारंभ कर चुकी हैं। इस प्रकार यह उद्यम महिला सशक्तिकरण, पोषण सुरक्षा और ग्रामीण आजीविका सुदृढ़ीकरण का एक प्रभावी मॉडल प्रस्तुत करता है।

निष्कर्ष

"रेणुप्रीथम मशरूम फार्म" यह सिद्ध करता है कि ऑयस्टर मशरूम उत्पादन भूमिहीन ग्रामीण महिलाओं के लिए एक व्यवहार्य, लाभकारी और स्थायी आजीविका विकल्प हो सकता है। यदि तकनीकी प्रशिक्षण, संस्थागत ऋण, बेहतर आधारभूत संरचना और विपणन समर्थन उपलब्ध कराया जाए, तो इस क्षेत्र में महिलाओं की भागीदारी को कई गुना बढ़ाया जा सकता है। अंतरराष्ट्रीय महिला किसान वर्ष 2026 के संदर्भ में यह केस अध्ययन नीति निर्माताओं, विकास संगठनों और कृषि विस्तार तंत्र के लिए एक महत्वपूर्ण संदेश देता है कि लक्षित हस्तक्षेपों के माध्यम से ग्रामीण महिलाओं को आत्मनिर्भर बनाया जा सकता है। मशरूम उत्पादन न केवल उनकी आय बढ़ाता है, बल्कि उन्हें सामाजिक पहचान, सम्मान और निर्णय क्षमता भी प्रदान करता है।

बीज, मिट्टी और जल का संतुलन: उत्पादन बढ़ाने की नई राह

शुभ्रांशु सिंह[1]*, राहुल यादव[2], अमन सिंह[3] एवं देवेश पाठक[4]
[1]* कृषि विस्तार प्रभाग, भा.कृ.अनु.प., कृषि अनुसंधान भवन–I, पूसा, नई दिल्ली
[2] रामा विश्वविद्यालय कानपुर, उत्तर प्रदेश
[3&4] आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या, उत्तर प्रदेश

खेती केवल बीज बोने और फसल काटने की प्रक्रिया नहीं है, बल्कि यह प्रकृति के साथ एक संवेदनशील संवाद है। इस संवाद में बीज, मिट्टी और जल तीनों की भूमिका समान रूप से महत्त्वपूर्ण होती है। यदि इनमें से किसी एक का भी संतुलन बिगड़ जाए, तो उत्पादन पर सीधा प्रभाव पड़ता है। आज जब जल संकट, मृदा क्षरण और बीजों की गुणवत्ता से जुड़ी चुनौतियाँ लगातार बढ़ रही हैं, तब कृषि उत्पादन बढ़ाने की नई राह इन तीनों घटकों के संतुलित और विवेकपूर्ण उपयोग से ही निकलती है। यह लेख बीज, मिट्टी और जल के आपसी संबंध, उनके संतुलन की आवश्यकता तथा व्यावहारिक कृषि प्रबंधन के माध्यम से सतत और लाभकारी उत्पादन की संभावनाओं को मानवीय दृष्टिकोण से प्रस्तुत करता है।

मुख्य बिंदु: उद्यानिकी प्रबंधन, पौधशाला, टिकाऊ उत्पादन

परिचय

किसान के लिए खेत केवल भूमि का टुकड़ा नहीं होता, बल्कि वह उसकी आशा, परिश्रम और भविष्य का प्रतीक होता है। हर मौसम में किसान यह उम्मीद लेकर बीज बोता है कि फसल अच्छी होगी, परिवार की आवश्यकताएँ पूरी होंगी और मेहनत का उचित फल मिलेगा। लेकिन यह उम्मीद तभी साकार होती है, जब बीज स्वस्थ हो, मिट्टी उपजाऊ हो और जल सही मात्रा में उपलब्ध हो। परंपरागत खेती में अक्सर इन तीनों तत्वों को अलग-अलग देखा गया, जबकि वास्तव में ये एक-दूसरे से गहराई से जुड़े हुए हैं। आज की आधुनिक और चुनौतीपूर्ण कृषि परिस्थितियों में यह समझना आवश्यक हो गया है कि बीज, मिट्टी और जल का संतुलन ही उत्पादन बढ़ाने की स्थायी कुंजी है। कृषि उत्पादन का आधार केवल उन्नत तकनीक नहीं, बल्कि प्रकृति के मूल घटकों बीज, मिट्टी और जलका संतुलित उपयोग है। आधुनिक खेती में अक्सर इन तीनों को अलग-अलग प्रबंधित किया जाता है, जबकि वास्तविकता यह है कि इनका आपसी तालमेल ही फसल की सफलता तय करता है। गुणवत्तायुक्त बीज, स्वस्थ एवं जीवंत मिट्टी तथा विवेकपूर्ण जल प्रबंधन, मिलकर उत्पादन बढ़ाने की स्थायी और पर्यावरण-अनुकूल राह प्रशस्त करते हैं। यह लेख मानवीय दृष्टिकोण से इन तीनों घटकों की भूमिका, उनके पारस्परिक संबंध तथा संतुलित प्रबंधन की आवश्यकता को स्पष्ट करता है, जिससे किसान न केवल अधिक उत्पादन प्राप्त कर सके, बल्कि खेती को दीर्घकालिक रूप से लाभकारी भी बना सके।

1. बीज की शक्ति: उत्पादन की पहली नींव

बीज केवल फसल की शुरुआत नहीं है, बल्कि वह पूरे उत्पादन चक्र की दिशा तय करता है। एक अच्छा बीज किसान को आश्वस्त करता है, जबकि कमजोर बीज उसकी सारी मेहनत पर पानी फेर सकता है।

बीज गुणवत्ता का महत्व

उत्तम बीज में अंकुरण क्षमता अधिक होती है, वह रोगों के प्रति सहनशील होता है और वातावरण के अनुकूल खुद को ढाल लेता है। जब किसान प्रमाणित और क्षेत्र-विशेष के अनुकूल बीज का चयन करता है, तो वह अनजाने में ही उत्पादन बढ़ाने की दिशा में पहला मजबूत कदम रख देता है।

एक खेत का दृश्य जहाँ एक ही किस्म के स्वस्थ बीजों से उगाई गई फसल समान ऊँचाई और हरियाली दिखाती है, जबकि पास के खेत में कमजोर बीजों से उगी फसल असमान और पीली दिखाई देती है।

बीज और जल-मिट्टी का संबंध

बीज तभी अपनी पूरी क्षमता दिखा पाता है, जब उसे उपयुक्त मिट्टी और पर्याप्त नमी मिले। बहुत अधिक पानी बीज को सड़ा सकता है, जबकि नमी की कमी अंकुरण रोक देती है। इसी प्रकार, पोषक तत्वों से रहित मिट्टी में अच्छा बीज भी कमजोर पौधा बन सकता है।

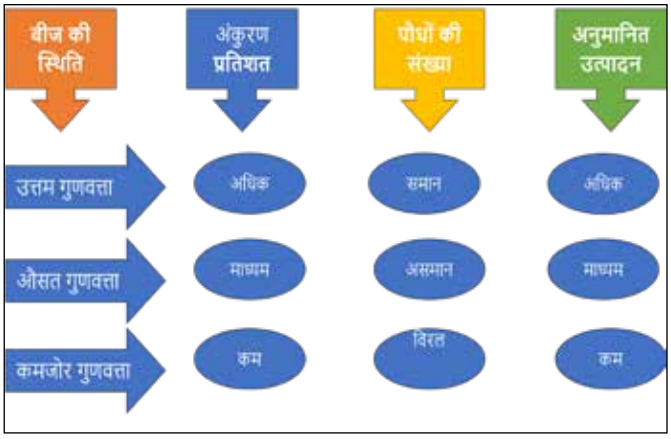

इस चित्र के माध्यम से बीज की गुणवत्ता सीधे उत्पादन से जुड़ी हुई है को दर्शाया गया है

2. मिट्टी: खेत की आत्मा और उत्पादन का आधार

मिट्टी को खेती की आत्मा कहा जाए तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। यही वह माध्यम है जो बीज और जल को जोड़कर जीवन का संचार करता है। उपजाऊ मिट्टी में जैविक पदार्थ, सूक्ष्म जीव और पोषक तत्व संतुलित रूप में उपस्थित रहते हैं, जिससे पौधों को निरंतर पोषण मिलता है।

आज अनेक क्षेत्रों में अत्यधिक रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग और असंतुलित खेती के कारण मिट्टी की संरचना बिगड़ रही है। इससे न केवल उत्पादन प्रभावित होता है, बल्कि जल धारण क्षमता भी घटती है। जीवंत मिट्टी वह होती है जो जल को आवश्यकतानुसार रोककर रखे और अतिरिक्त जल को बाहर निकाल दे।

मिट्टी की उर्वरता और संरचना

अच्छी मिट्टी वह होती है जिसमें कार्बनिक पदार्थ, सूक्ष्म जीव और पोषक तत्व संतुलित मात्रा में हों। जब मिट्टी जीवंत होती है, तो वह पौधों की जड़ों को सहारा देती है और उन्हें आवश्यक पोषण प्रदान करती है।

एक ओर भुरभुरी, गहरी रंग की मिट्टी जिसमें केंचुए दिखाई दे रहे हैं, और दूसरी ओर कठोर, फटी हुई मिट्टी दोनों के बीच स्पष्ट अंतर दर्शाता दृश्य।

मिट्टी और जल का तालमेल

मिट्टी की बनावट यह तय करती है कि जल कितनी देर तक रुकेगा और पौधों को कितना उपलब्ध होगा। रेतीली मिट्टी में जल जल्दी निकल जाता है, जबकि भारी मिट्टी में जल रुक जाता है। दोनों ही स्थितियों में संतुलन आवश्यक है।

सारणी:1. मिट्टी के प्रकार और जल धारण क्षमता

क्रम संख्या	मिट्टी का प्रकार	जल धारण क्षमता	फसल पर प्रभाव
1	रेतीली मिट्टी	कम	बार-बार सिंचाई आवश्यक
2	दोमट मिट्टी	मध्यम	सर्वोत्तम उत्पादन
3	चिकनी मिट्टी	अधिक	जल निकास की आवश्यकता

3. जल प्रबंधन: सीमित संसाधन, अनंत महत्व

जल के बिना खेती की कल्पना अधूरी है। लेकिन आज जल की उपलब्धता सीमित होती जा रही है। ऐसे में जल का विवेकपूर्ण और संतुलित उपयोग ही उत्पादन बढ़ाने की नई राह दिखाता है।

अधिक और कम सिंचाई की समस्या

अक्सर किसान यह मान लेते हैं कि अधिक पानी देने से फसल अच्छी होगी, जबकि वास्तव में अधिक सिंचाई से जड़ें कमजोर हो जाती हैं और पोषक तत्व बह जाते हैं। वहीं, कम पानी पौधों को तनाव में डाल देता है।

एक खेत में जलभराव से पीली पड़ती फसल और दूसरे खेत में नियंत्रित सिंचाई से हरी-भरी फसल का तुलनात्मक दृश्य।

संतुलित जल उपयोग की तकनीकें

जब किसान फसल की अवस्था, मिट्टी की नमी और मौसम को ध्यान में रखकर सिंचाई करता है, तो जल की बचत के साथ-साथ उत्पादन भी बढ़ता है। यह संतुलन खेती को आर्थिक और पर्यावरणीय दोनों दृष्टियों से मजबूत बनाता है।

4. संतुलन की समग्र सोच: बीज–मिट्टी–जल का एकीकृत दृष्टिकोण

जब बीज, मिट्टी और जल को अलग-अलग नहीं, बल्कि एक इकाई के रूप में देखा जाता है, तब खेती का स्वरूप बदल जाता है।

यह समग्र सोच किसान को जोखिम से निकालकर स्थायित्व की ओर ले जाती है।

व्यावहारिक अनुभव और किसान की भूमिका

किसान अपने अनुभव से जानता है कि कब खेत को पानी चाहिए, कब मिट्टी को आराम और कब बीज को संरक्षण। जब यह अनुभव वैज्ञानिक समझ के साथ जुड़ता है, तो उत्पादन में निरंतर वृद्धि संभव होती है।

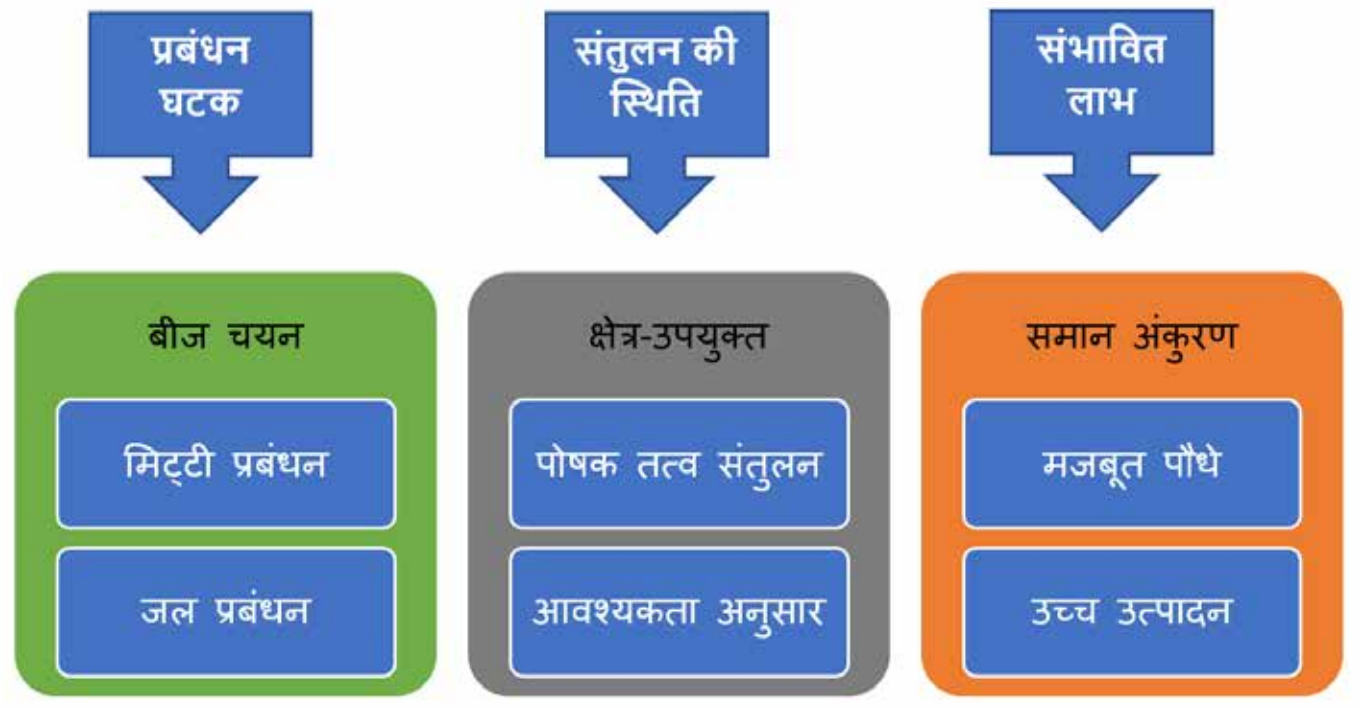

संतुलित प्रबंधन और संभावित लाभ

सारांश

यह लेख इस तथ्य को रेखांकित करता है कि कृषि उत्पादन बढ़ाने की नई राह किसी एक तकनीक या साधन पर निर्भर नहीं है, बल्कि बीज, मिट्टी और जल के संतुलित उपयोग पर आधारित है। उत्तम बीज, जीवंत मिट्टी और विवेकपूर्ण जल प्रबंधनये तीनों मिलकर ही खेत को समृद्ध बनाते हैं। जब किसान इन तीनों के बीच संतुलन बनाता है, तो वह न केवल अधिक उत्पादन प्राप्त करता है, बल्कि खेती को आने वाली पीढ़ियों के लिए भी सुरक्षित बनाता है। यह संतुलन ही आधुनिक खेती का मूल मंत्र है।

निष्कर्ष

अंततः कहा जा सकता है कि बीज, मिट्टी और जल का संतुलन केवल तकनीकी विषय नहीं, बल्कि किसान और प्रकृति के बीच विश्वास का रिश्ता है। जब किसान इस रिश्ते को समझता है और उसका सम्मान करता है, तो खेत केवल अन्न ही नहीं, बल्कि स्थिरता, समृद्धि और संतोष भी देता है। उत्पादन बढ़ाने की नई राह किसी चमत्कार में नहीं, बल्कि इसी संतुलित और संवेदनशील कृषि दृष्टिकोण में छिपी हुई है।

भारतीय शैली से खाना पकाने के लिए स्वास्थ्यवर्धक खाद्य तेल का चयन

स्नेहा अधिकारी, यशपाल, नविन्द्र सैनी एवं देवेन्द्र कुमार यादव
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

कोरोनरी हृदय रोग एक प्रमुख वैश्विक स्वास्थ्य समस्या है जो भारत में तेजी से बढ़ रही है। विशेष रूप से खाद्य तेलों से प्राप्त आहार वसा , कोरोनरी हृदय रोग के जोखिम में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। भारतीय खाना पकाने में उच्च तापमान पर तलने जैसी विधियाँ उपयोग होती हैं जिससे बहुअसंतृप्त वसीय अम्ल टूटकर हानिकारक तत्वों में बदल जाती है। सरसों का तेल उचित ओमेगा-6 और ओमेगा-3 अनुपात, कम संतृप्त वसा और उच्च मोनोअनसैचुरेटेड वसा के कारण अधिक स्थिर और हृदय-हितैषी है। 2 प्रतिशत से कम एरूसिक अम्ल वाली उन्नत सरसों किस्मों में ओमेगा-9 कि अधिक मात्रा और ओमेगा-6, ओमेगा-3 वसा अम्लों का संतुलित मिश्रण होता है जिस वजह से ये स्वास्थ्य के लिए और अधिक लाभकारी हैं।

विश्व स्तर पर, कोरोनरी हृदय रोग मृत्यु दर का प्रमुख कारण बना हुआ है, और विशेष रूप से भारत जैसे विकासशील देशों में इसकी घटनाएं तेजी से बढ़ रही हैं। आहार कारको में विशेष रूप से खाद्य तेल कि गुणवत्ता, कोरोनरी हृदय रोग के विकास, उपचार, प्रबंधन और रोकथाम में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। भारत में, खाना पकाने का तेल दैनिक आहार का एक अनिवार्य हिस्सा हैं; हालांकि, उपभोक्ताओं के सामने विभिन्न प्रकार के तेलों का विकल्प होता है। इसलिए, सही खाद्य तेल का चयन करना विशेष रूप से भारतीय संदर्भ में महत्वपूर्ण है, जहां खाना पकाने की विधियाँ पश्चिमी देशों से काफी भिन्न होती हैं। विभिन्न जनसंख्या समूहों में किए गए विस्तृत रोग विषयक परीक्षणों और प्रेक्षणीय अध्ययनों से लगातार यह साबित हुआ है कि आहार वसा की गुणवत्ता और मात्रा का कोरोनरी हृदय रोग के खतरे से गहरा संबंध है। क्योंकी आहार वसा का प्लाज्मा लिपिड के स्तर पर प्रभाव पड़ता है जिस कारण आहार का हृदय रोगो के साथ सीधा संबंध होता है।

खाद्य तेलों में विविध प्रकार के वसा अम्ल (फैटी एसिड) पाए जाते हैं, जिन्हें मुख्यतः तीन श्रेणियों में वर्गीकृत किया जाता हैः संतृप्त वसा अम्ल, एकल असंतृप्त वसा अम्ल, और बहुअसंतृप्त वसा अम्ल। इनमें से संतृप्त वसा अम्लों को उनकी कार्बन श्रृंखला की लंबाई के आधार पर छोटी श्रृंखला, मध्यम श्रृंखला, और लंबी श्रृंखला के संतृप्त वसा अम्ल में विभाजित किया जाता है। वहीं बहुअसंतृप्त वसा अम्लों के अंतर्गत लिनोलिक अम्ल (ओमेगा-6) और अल्फा-लिनोलेनिक अम्ल (ओमेगा-3) जैसे आवश्यक अम्ल शामिल होते हैं, जो शरीर के लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इसके साथ ही, ट्रांस वसा अम्ल भी खाद्य तेलों में मौजूद होते हैं, जो प्रमुख रूप से दो स्रोतों से उत्पन्न होते हैंः पहला, वनस्पति तेलों के हाइड्रोजनीकरण (जैसे वनस्पति घी निर्माण की प्रक्रिया) के दौरान बनते हैं, और दूसरा, समुद्री जीवों (मछलियों, शैवाल आदि) के तेलों में प्राकृतिक रूप से पाए जाते हैं। तालिका 1 में विभिन्न खाद्य तेलों की फैटी एसिड संरचना का अनुमानित विवरण प्रस्तुत किया गया है। संतृप्त वसा अम्ल को स्वास्थ्य के लिए हानिकारक माना जाता है, क्योंकि ये कुल कोलेस्ट्रॉल और कम घनत्व वाले लिपोप्रोटीन के स्तर को बढ़ाकर एथेरोस्क्लेरोसिस (धमनियों में प्लाक जमाव) के जोखिम को उच्च कर देते हैं। इसके विपरीत, एकल असंतृप्त वसा अम्ल और बहुअसंतृप्त वसा अम्ल कम घनत्व वाले लिपोप्रोटीन -कोलेस्ट्रॉल को कम करके हृदय-सुरक्षात्मक प्रभाव प्रदान करते हैं। इनमें लिनोलिक अम्ल (ओमेगा-6) और अल्फा-लिनोलेनिक अम्ल (ओमेगा-3) प्रमुख आवश्यक वसा अम्ल हैं, जो शरीर के सामान्य कार्यप्रणाली के लिए अनिवार्य होते हैं। हालाँकि, ओमेगा-6 बहुअसंतृप्त वसा अम्ल , कम घनत्व वाले लिपोप्रोटीन -कोलेस्ट्रॉल के स्तर को घटाने के साथ-साथ उच्च घनत्व वाले लिपोप्रोटीन को भी कम कर देते हैं, जबकि ओमेगा-3 बहुअसंतृप्त वसा अम्ल ट्राइग्लिसराइड्स और रक्तचाप को नियंत्रित करने, संवहनी कार्य में सुधार लाने, तथा अचानक हृदयाघात से मृत्यु की संभावना को कम करने में सहायक होते हैं। यह ध्यान रखना आवश्यक है कि ओमेगा-6 और ओमेगा-3 बहुअसंतृप्त वसा अम्लों का संतुलित अनुपात शरीर में बनाए रखा जाए, क्योंकि ये दोनों उन एंजाइमों के लिए प्रतिस्पर्धा करते हैं जो इन्हें सक्रिय यौगिकों (जैसे ईकोसानॉइड्स) में परिवर्तित करते हैं। चूँकि लिनोलिक और अल्फा-लिनोलेनिक अम्ल मानव शरीर में स्वतः संश्लेषित नहीं होते, इसलिए इन्हें आहार के माध्यम से प्राप्त करना अनिवार्य है। परंतु, बहुअसंतृप्त वसा अम्लों की अधिक मात्रा तेल के ऑक्सीकरण को बढ़ावा देती है, जिससे तेल की गुणवत्ता एवं स्वाद प्रभावित होते हैं और भंडारण अवधि घट जाती है।

तालिका 1ः प्रमुख खाद्य तेलों की वसा अम्ल संरचना

rsy dk lkr	lrIr olk vEy									vlrIr olk vEy							
	NkVh J`[kyk			eè;e J`[kyk			yach J`[kyk										
	4%0 ¼ch½	6%0 ¼lh ih½	8%0 ¼lh ,y½	10%0 ¼lh½	12%0 ¼y½	14%0 ¼e½	16%0 ¼ih½	18%0 ¼l½	20%0 ¼,½	15%1 ¼ih Mh½	16%1 ¼ih ,y½	18%1 ¼vk½ ¼vkexk&9½	18%2 ¼fyuk½ ¼vkexk&6½	18%3 ¼, ,y ,½ ¼vkexk&3½	20%1 ¼Ã½	22%1 ¼b#½	vkexk 6@ vkexk 3
नारियल	—	—	8.0	6.4	48.5	17.6	8.4	2.50	0.1	—	—	6.5	1.5	ढ0.5	—	—	3:1
ताड़ कर्नेल	—	—	3.9	4.0	49.6	16.0	8.0	2.40	0.1	—	—	13.7	2.00	ढ0.5	—	—	4:1
ताड़	—	—	—	—	—	—	45.1	4.70	0.2	—	0.1	38.8	9.40	0.3	—	—	32:1
जैतून	—	—	—	—	—	—	13.7	2.50	0.9	—	1.2	71.1	10.00	0.6	—	—	17:1
मूंगफली	—	—	—	—	—	0.1	11.6	3.10	1.5	—	0.2	46.5	31.40	<0.5	1.40	—	63:1
चावल का भूसा	—	—	0.1	0.1	0.4	0.5	16.4	2.10	0.5	—	0.3	43.8	34.00	1.2	—	—	29:1
सरसों	—	—	—	—	—	1.4	3.8	1.10	—	—	0.2	11.6—25.0	15.3—30.0	5.9—15	6.20	30—60	2:1
मक्का	—	—	—	—	—	—	12.2	2.20	0.1	—	0.1	27.5	57.00	0.9	—	—	64:1
कपास	—	—	—	—	—	—	24.7	2.30	0.1	—	0.7	17.6	53.30	0.3	—	—	178:1
सूरजमुखी	—	—	—	—	0.5	—	6.8	4.70	0.4	—	0.1	18.6	68.20	0.5	—	—	135:1
कुसुम	—	—	—	—	—	—	6.5	2.40	0.2	—	—	13.1	77.70	<0.5	—	—	156:1
सोयाबीन	—	—	—	—	—	—	11.0	4.00	0.3	—	0.1	23.4	53.20	7.80	—	—	7:1
अलसी	—	—	—	—	—	—	4.8	4.70	—	—	—	19.9	15.90	52.70	—	—	0.30:1
तिल	—	—	—	—	—	—	9.9	5.20	—	—	0.3	41.2	43.10	0.50	—	—	87:1
रामतिल			—	—		—	7.2	5.30	—	—	0.1	31.1	56.30	0.20	—	—	282:1
देशी घी	3.4	1.1	0.6	1.4	1.9	10.4	34.4	11.4	0.2	1.4	2.6	24.8	00.90	0.20	0.1	—	4:1

संक्षिप्तः बीः ब्यूटिरिक अम्ल, सी पीः कैप्रोइक अम्ल, सी एलः कैप्रिक्लिक अम्ल, सीः कैप्रिक अम्ल, लः लॉरिक अम्ल, मः -मिरिस्टिक अम्ल, पीः पामिटिक अम्ल, स- स्टीयरिक अम्ल, ए- एराचिडिक अम्ल,पी डीः पेंटाडेकैनोइक अम्ल, पी एल- पामिटोलिक अम्ल, ओ -ओलिक अम्ल, लिनो- लिनोलिक अम्ल, ए एल ए-α लिनोलेनिक अम्ल, ई-ईकोसोनोइक अम्ल, इरू- इरूसिक अम्ल

भारतीय खाना पकाने की स्थिति

भारतीय पाक पद्धति में अक्सर तेलों को अत्यधिक उच्च तापमान (170° से अधिक) पर गर्म किया जाता है, खासकर डीप-फ्राइंग के दौरान। शोधों से पता चला है कि उच्च असंतृप्त वसा अम्ल वाले परिष्कृत तेल (जैसे सूरजमुखी या सोयाबीन तेल) इन परिस्थितियों में तेजी से टूटकर मुक्त कण (फ्री रेडिकल्स), ट्रांस वसा अम्ल, और मैलोंडियलडिहाइड जैसे विषैले पदार्थ उत्पन्न करते हैं। ये यौगिक धमनियों में प्लाक जमाव (एथेरोस्क्लेरोसिस) को बढ़ाने वाले प्रभाव डालते हैं। तेल के बार-बार उपयोग से यह समस्या और गंभीर हो जाती है, जिससे हृदय रोग के जोखिम को बढ़ाने वाले हानिकारक यौगिकों की मात्रा बढ़ जाती है। उदाहरण के लिए, एक भारतीय अध्ययन में पाया गया कि हलवाइयों द्वारा बार-बार इस्तेमाल किए गए तेलों में ट्रांस वसा अम्ल का स्तर खतरनाक सीमा तक पहुँच गया था। ये ट्रांस वसा अम्ल मुख्य रूप से वनस्पति तेलों के हाइड्रोजनीकरण (जैसे वनस्पति घी बनाने की प्रक्रिया) के दौरान बनते हैं। ये रक्त में कम घनत्व वाले लिपोप्रोटीन (खराब कोलेस्ट्रॉल) को बढ़ाते हैं और उच्च घनत्व वाले लिपोप्रोटीन (अच्छा कोलेस्ट्रॉल) को कम करके कोरोनरी हृदय रोग के खतरे को गंभीर बना देते हैं। विशेषज्ञों के अनुसार, ट्रांस वसा अम्ल संतृप्त वसा की तुलना में 2-3 गुना अधिक हानिकारक होते हैं, क्योंकि ये धमनियों की लचीलापन कम करके रक्त प्रवाह में अवरोध पैदा करते हैं। इसके अलावा, ये धमनियों में सूजन और ऑक्सीडेटिव तनाव को भी बढ़ावा देते हैं, जो दीर्घकालिक स्वास्थ्य जोखिमों को जन्म दे सकते हैं।

सरसों का तेल अधिक उपयुक्त क्यों है?

कई आहार संबंधी संस्तुति के अनुसार, हृदय रोग की रोकथाम के लिए ओमेगा-6 से ओमेगा-3 असंतृप्त वसा अम्ल का आदर्श अनुपात 5-10:1 या इससे कम होना चाहिए। सरसों के तेल में अनुकूल लिनोलिक अम्ल और अल्फा-लिनोलेनिक अम्ल का संतुलित अनुपात पाया जाता है। इसमें संतृप्त वसा अम्ल की मात्रा

कम होती है, जबकि एकल असंतृप्त और बहुअसंतृप्त वसा अम्ल की मात्रा अधिक होती है। इसके अलावा, खाना पकाने के दौरान इसकी स्थिरता अधिक होने के कारण यह हृदय-स्वस्थ आहार के लिए एक उपयुक्त विकल्प बनता है।

उच्च गुणवत्ता वाली सरसों की किस्मों का महत्व

पारंपरिक सरसों के तेल में इरूसिक अम्ल (एक प्रमुख असंतृप्त वसा अम्ल) की मात्रा कुल वसा अम्ल का 45-55 प्रतिशत तक होती है। हालाँकि, पोषण विज्ञान से जुड़े शोध बताते हैं कि इरूसिक अम्ल हृदय की मांसपेशियों के लिए हानिकारक हो सकता है और यह मायोकार्डियल फाइब्रोसिस (हृदय में रेशेदार ऊतकों का बनना) से जुड़ा हुआ है। इस स्वास्थ्य संबंधी चिंता को दूर करने के लिए, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान (भा.कृ.अ.स.), नई दिल्ली ने सरसों की नई किस्में विकसित की हैं, जिनमें इरूसिक अम्ल की मात्रा 2 प्रतिशत से भी कम है। पारंपरिक सरसों की तुलना में इन कम-इरूसिक अम्ल वाली किस्मों का पोषण विश्लेषण दर्शाता है कि इरूसिक अम्ल की कमी को ओमेगा-9, ओमेगा-6 और ओमेगा-3 वसा अम्लों के बढ़े हुए स्तर से संतुलित किया गया है। साथ ही, इनमें लिनोलिक अम्ल और अल्फा-लिनोलेनिक अम्ल का अनुकूल अनुपात (तालिका-2 देखें) भी बना हुआ है। इस प्रकार, यह उन्नत सरसों न केवल बेहतर पोषण प्रदान करती है, बल्कि भारतीय व्यंजनों के पारंपरिक स्वाद और उपयोग के लिए भी अधिक उपयुक्त है।

तालिका 2ः भा.कृ.अ.प.- भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान द्वारा विकसित गुणवत्ता वाली सरसों की विभिन्न किस्मों की वसा अम्ल संरचना

lljlk dh fdLe	rsy dk çfr'kr	olk vEy lajpuk						vkesxk 6 @ vkesxk 3
		ih	vks ¼vkesxk&9½	fyuks ¼vkesxk&6½	, ,y , ¼vkesxk&3½	Ã	b#	
पूसा करिश्मा	38.00	8.12	31.51	40.20	19.34	0.81	0.03	2.08
पूसा सरसों–21	36.00	8.43	32.75	37.28	20.77	0.86	0.00	1.79
पूसा सरसों–22	35.50	7.79	42.78	33.71	14.43	1.31	0.00	2.34
पूसा सरसों–24	36.55	9.45	28.35	42.26	19.26	0.67	0.00	2.19
पूसा सरसों–29	37.20	10.13	29.74	43.19	15.17	1.22	0.00	2.85
पूसा सरसों–30	37.70	9.36	28.07	37.09	24.64	0.85	0.00	1.51
पूसा सरसों–31	40.56	8.31	41.27	38.77	10.61	1.02	0.03	3.65
पूसा सरसों–32	38.00	8.17	36.48	36.68	17.61	1.07	0.00	2.08
पूसा सरसों–33	38.00	7.88	33.82	41.82	15.45	1.05	0.00	2.71
पूसा सरसों–34	36.00	4.00	45.90	33.08	12.00	1.15	0.00	2.76
पूसा सरसों–35	42.05	4.94	40.32	40.79	10.92	0.83	0.81	3.74
पूसा सरसों–36	41.82	4.31	40.61	38.67	12.15	1.01	0.00	3.18

पीः पामिटिक अम्ल, ओ- ओलिक अम्ल, लिनो- लिनोलिक अम्ल, ए एल ए- α लिनोलेनिक अम्ल, ई-ईकोसोनोइक अम्ल, इरू- इरूसिक अम्ल

निष्कर्ष

भारतीय खाना पकाने की शैली, विशेष रूप से उच्च तापमान पर तेल गर्म करने की प्रक्रिया, वैश्विक मानकों से भिन्न है। उदाहरण के लिए, करी या अन्य व्यंजन बनाते समय स्टर-फ्राई जैसी तकनीकों का उपयोग होता है, जहाँ तीव्र गर्मी के कारण विटामिन ई और β-कैरोटीन जैसे लाभकारी एंटीऑक्सिडेंट नष्ट हो जाते हैं। इसके अलावा, यह प्रक्रिया हानिकारक उप-उत्पादों (जैसे फ्री रेडिकल्स) को भी जन्म दे सकती है, जो शरीर में धमनियों में रुकावट जैसी गंभीर समस्याओं का कारण बनते हैं। इन जोखिमों को कम करने के लिए परिष्कृत तेलों के उपयोग से बचना चाहिए, क्योंकि परिष्करण प्रक्रिया में तेल को अत्यधिक गर्म किया जाता है, जिससे हानिकारक यौगिकों के निर्माण की संभावना बढ़ जाती है। विशेष रूप से, असंतृप्त वसा अम्ल से भरपूर परिष्कृत तेल ताप के प्रति संवेदनशील होते हैं और जल्दी विघटित होकर स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हो जाते हैं। इस संदर्भ में, सरसों के तेल की वसा अम्ल संरचना जैसे लिनोलिक और अल्फा-लिनोलेनिक अम्ल का अनुकूल अनुपात, कम संतृप्त वसा, और उच्च मात्रा में एकल असंतृप्त वसा इसे भारतीय पाक शैली के लिए आदर्श बनाती है। साथ ही, भा.कृ.अ.प. द्वारा विकसित उन्नत सरसों की किस्मों (जिनमें इरूसिक अम्ल 2 प्रतिशत से कम है) में ओमेगा-9, ओमेगा-6 और ओमेगा-3 वसा अम्लों का संतुलित मिश्रण होता है, जो पोषण संबंधी गुणों को बढ़ाता है। इन किस्मों में ओमेगा-6 और ओमेगा-3 का अनुपात (लगभग 2:1) भारतीय व्यंजनों में उच्च तापमान पर पकाने की आवश्यकताओं के साथ-साथ स्वास्थ्य लाभों को भी सुनिश्चित करता है।

पूसा सरसों-30
Pusa Mustard-30
(2013)

पूसा सरसों ३२
Pusa Mustard 32

पूसा सरसों 33
Pusa Mustard 33

महिला कृषक : सतत कृषि, खाद्य सुरक्षा एवं ग्रामीण सशक्तिकरण का आधार

अनन्ता वशिष्ठ, मोनिका कुंडू, पी. कृष्णन एवं सुभाष नटराज पिल्लई
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

भारत एक कृषि प्रधान देश है और यहाँ की कृषि व्यवस्था की असली शक्ति गाँवों में बसती है, और इस शक्ति की धुरी महिला कृषक हैं। । जब हम किसान की कल्पना करते हैं, तो अक्सर पुरुष किसान का चेहरा सामने आता है, जबकि वास्तविकता यह है कि कृषि की रीढ़ महिला कृषक हैं। खेत की तैयारी से लेकर फसल की बीज चयन, रोपाई, निराई-गुड़ाई, कटाई, पशुपालन, भंडारण, प्रसंस्करण और परिवार के पोषण प्रबंधन तक—हर स्तर पर महिलाओं की भागीदारी निर्णायक है। इसके बावजूद लंबे समय तक उनका योगदान अदृश्य बना रहा। आज सतत कृषि, खाद्य सुरक्षा, जलवायु परिवर्तन और ग्रामीण विकास की चर्चा में महिला कृषक की भूमिका को पहचानना और सशक्त बनाना अनिवार्य हो गया है।

कृषि में महिलाओं की ऐतिहासिक भूमिका

भारतीय कृषि में महिलाओं की भूमिका कोई नई बात नहीं है। परंपरागत खेती प्रणालियों में महिलाएँ बीज संरक्षण, मिश्रित खेती, घरेलू बागवानी और पशुधन प्रबंधन की प्रमुख जिम्मेदार रही हैं। पीढ़ी दर पीढ़ी उन्होंने स्थानीय ज्ञान को सँजोकर रखा—किस मौसम में कौन-सी फसल उपयुक्त है, किस मिट्टी में कौन-सा बीज बेहतर रहेगा, प्राकृतिक खाद कैसे तैयार की जाए—ये सभी जानकारियाँ महिला कृषकों के अनुभव का हिस्सा रही हैं। यही पारंपरिक ज्ञान आज सतत कृषि का आधार बन रहा है। विश्व और भारत—दोनों स्तरों पर कृषि श्रम में महिलाओं की हिस्सेदारी उल्लेखनीय है। अनेक विकासशील देशों में महिलाएँ खाद्य फसलों के उत्पादन और घरेलू पोषण की प्रमुख वाहक हैं। समान संसाधन मिलने पर महिलाओं की उत्पादकता पुरुषों के समकक्ष पाई गई है, जिससे उपज और आय—दोनों में वृद्धि संभव है।

भारतीय कृषि में महिला कृषक का योगदान

भारत में ग्रामीण महिलाओं का बड़ा हिस्सा कृषि एवं संबद्ध क्षेत्रों में कार्यरत है। वे पारंपरिक ज्ञान की संवाहक हैं—स्थानीय बीज, मिश्रित खेती, किचन गार्डन और पशुधन प्रबंधन में उनका अनुभव अमूल्य है। ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाएँ सुबह से शाम तक अनेक कृषि कार्यों में लगी रहती हैं। धान की रोपाई, सब्जियों की निराई-गुड़ाई, कटाई के बाद सफाई, अनाज का भंडारण, पशुओं की देखभाल और दुग्ध प्रबंधन—इन सबमें उनका श्रम झलकता है। इसके साथ-साथ वे घर, बच्चों और बुज़ुर्गों की जिम्मेदारी भी निभाती हैं। यह दोहरी भूमिका महिला कृषक को परिवार और कृषि—दोनों की धुरी बनाती है। भारत में ग्रामीण महिलाओं की बड़ी संख्या कृषि एवं संबद्ध क्षेत्रों में कार्यरत है। वे पारंपरिक ज्ञान की संवाहक हैं—जैसे स्थानीय बीज, मिश्रित खेती, किचन गार्डन और पशुधन प्रबंधन। हाल के वर्षों में स्वयं सहायता समूह (SHG), महिला FPO और कृषि-आधारित सूक्ष्म उद्यमों ने महिलाओं की आय और निर्णय-क्षमता बढ़ाई है।

खाद्य सुरक्षा में महिला कृषक का योगदान

खाद्य सुरक्षा केवल पर्याप्त अनाज उत्पादन तक सीमित नहीं है, बल्कि इसमें भोजन की उपलब्धता, पहुँच और पोषण गुणवत्ता भी शामिल है। महिला कृषक इस तीनों स्तरों पर महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। किचन गार्डन के माध्यम से ताज़ी सब्जियाँ, हरी पत्तेदार साग, फल और मसाले उगाकर वे परिवार के भोजन को संतुलित बनाती हैं। दालें, मोटे अनाज और दूध-दही जैसे पोषक तत्वों को भोजन में शामिल करने का निर्णय प्रायः महिलाओं द्वारा लिया जाता है। इसलिए जहाँ महिला कृषक सशक्त होती है, वहाँ बच्चों और महिलाओं में कुपोषण की समस्या कम देखी जाती है। महिलाएँ परिवार के भोजन चयन, विविधता और पोषण गुणवत्ता को सीधे प्रभावित करती हैं। किचन गार्डन, मोटे अनाज, दालें, सब्जियाँ और दूध—इन सबका समावेश पोषण सुरक्षा को सुदृढ़ करता है। महिला-नेतृत्व वाली खेती प्रणालियाँ अक्सर जैव विविधता-अनुकूल होती हैं, जो दीर्घकालिक खाद्य सुरक्षा के लिए लाभकारी है।

पोषण और स्वास्थ्य की संरक्षक

महिला कृषक केवल अन्न उत्पादन तक सीमित नहीं हैं, वे परिवार के स्वास्थ्य की संरक्षक भी हैं। पारंपरिक व्यंजन, मौसमी खाद्य पदार्थ और स्थानीय फसलों का उपयोग—ये सभी पोषण सुरक्षा को मजबूत बनाते हैं। आज जब बाज़ार आधारित भोजन और जंक फूड का प्रचलन बढ़ रहा है, तब महिला कृषकों द्वारा अपनाई गई पारंपरिक खाद्य प्रणालियाँ स्वास्थ्य के लिए वरदान सिद्ध हो सकती हैं।

सतत कृषि की आधारशिला

सतत कृषि का अर्थ है—ऐसी खेती जो वर्तमान आवश्यकताओं को पूरा करे, लेकिन भविष्य की पीढ़ियों के संसाधनों को नुकसान न पहुँचाए। महिला कृषक स्वाभाविक रूप से इस सोच के करीब हैं। वे रसायनों के सीमित उपयोग, जैविक खाद, गोबर-खाद, हरी

खाद, फसल अवशेषों के पुनः उपयोग और जल संरक्षण पर अधिक ध्यान देती हैं। बीजों का संरक्षण और आदान-प्रदान, मिश्रित खेती और फसल विविधीकरण—ये सभी तरीके पर्यावरण के अनुकूल हैं और जोखिम को कम करते हैं। इस प्रकार महिला कृषक प्रकृति और खेती के बीच संतुलन बनाए रखने वाली सेतु हैं। महिला कृषक प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण पर स्वाभाविक ध्यान देती हैं—जैविक खाद, गोबर-खाद, हरी खाद, फसल अवशेषों का पुनः उपयोग, जल संरक्षण और मिश्रित खेती। यह दृष्टि पर्यावरण-अनुकूल है और जोखिम घटाती है।

तालिका 1: महिला नेतृत्व वाली प्रथाएँ और उनके लाभ

प्रथा	लाभ	अपेक्षित प्रभाव
बीज संरक्षण	स्थानीय अनुकूलन	स्थिर उपज
मिश्रित खेती	जोखिम विभाजन	आय स्थिरता
जैविक खाद	मिट्टी स्वास्थ्य	दीर्घकालिक उत्पादकता
जल संरक्षण	जल बचत	सूखा सहनशीलता

तकनीक और महिला कृषक

तकनीक ने कृषि का स्वरूप बदला है और यदि यह महिलाओं तक पहुँचे, तो परिवर्तन और तेज़ हो सकता है। मोबाइल फोन के माध्यम से मौसम की जानकारी, कृषि सलाह, कीट-रोग प्रबंधन और बाज़ार भाव की जानकारी आज कई महिला कृषकों तक पहुँच रही है। तकनीकी सशक्तिकरण महिला कृषकों के श्रम को घटाता और उत्पादकता बढ़ाता है।

सूक्ष्म सिंचाई तकनीकें जैसे ड्रिप और स्प्रिंकलर महिलाओं के श्रम को कम करती हैं और जल की बचत भी करती हैं। उन्नत बीज, बेहतर खेती पद्धतियाँ और महिला-अनुकूल कृषि यंत्र—इन सबने महिला कृषकों का आत्मविश्वास बढ़ाया है। मोबाइल-आधारित मौसम सलाह, कृषि कॉल सेवाएँ, उन्नत बीज और सूक्ष्म सिंचाई तकनीकें—महिला कृषकों के श्रम को कम करती हैं और उत्पादकता बढ़ाती हैं। महिला-अनुकूल यंत्र (हल्के व सुरक्षित) खेत के काम को आसान बनाते हैं।

तकनीक अपनाने से महिला कृषक की कार्य-दक्षता तथा आय में वृद्धि

तालिका 2: तकनीकी का उपयोग

तकनीक	उपयोग	संभावित लाभ
मोबाइल मौसम सलाह	समयानुकूल निर्णय	जोखिम में कमी
ड्रिप/स्प्रिंकलर सिंचाई	जल-कुशल सिंचाई	20–30% उपज वृद्धि, पानी की बचत
उन्नत बीज	बेहतर अंकुरण	आय में वृद्धि
महिला-अनुकूल यंत्र	श्रम में कमी	कार्य दक्षता

स्वयं सहायता समूह : सशक्तिकरण का माध्यम

स्वयं सहायता समूह (SHG) ग्रामीण महिलाओं के लिए सशक्तिकरण का मजबूत मंच बने हैं। इन समूहों के माध्यम से महिलाएँ बचत, ऋण, प्रशिक्षण और सामूहिक विपणन से जुड़ रही हैं। बीज उत्पादन, सब्जी प्रसंस्करण, अचार-पापड़, मशरूम उत्पादन, डेयरी और अन्य कृषि-आधारित गतिविधियों से महिलाएँ अतिरिक्त आय अर्जित कर रही हैं। इससे उनकी आर्थिक स्थिति सुधरती है, निर्णय-क्षमता बढ़ती है और परिवार में उनका सम्मान बढ़ता है।

तालिका 3: स्वयं सहायता समूह (SHG) आधारित गतिविधियाँ

गतिविधि	लाभ	सामाजिक प्रभाव
बीज/नर्सरी	स्थानीय रोजगार	कौशल विकास
प्रसंस्करण	मूल्य संवर्धन	आय वृद्धि
डेयरी	नियमित नकदी	पोषण सुधार
सामूहिक विपणन	बेहतर दाम	बाज़ार पहुँच

महिला कृषक और ग्रामीण अर्थव्यवस्था

महिला कृषकों की आय बढ़ने का सीधा प्रभाव ग्रामीण अर्थव्यवस्था पर पड़ता है। अतिरिक्त आय बच्चों की शिक्षा, स्वास्थ्य और पोषण पर खर्च होती है। इससे मानव संसाधन मजबूत होता है और गाँवों का समग्र विकास संभव होता है। जब महिलाएँ आर्थिक रूप से सशक्त होती हैं, तो वे स्थानीय निर्णय-प्रक्रियाओं में भी अधिक सक्रिय भूमिका निभाती हैं।

चुनौतियाँ

इतने व्यापक योगदान के बावजूद महिला कृषकों को कई चुनौतियों का सामना करना पड़ता है।

- भूमि स्वामित्व का अभाव: भूमि का स्वामित्व प्रायः पुरुषों के नाम होता है।
- ऋण, बीमा और सरकारी योजनाओं तक उनकी पहुँच सीमित रहती है।
- प्रशिक्षण कार्यक्रमों में महिलाओं की भागीदारी कम होती है।
- सामाजिक और पारंपरिक बंधन निर्णय-निर्माण में बाधा बनते हैं।
- इन चुनौतियों के समाधान के बिना महिला कृषक की पूरी क्षमता सामने नहीं आ सकती।

जलवायु परिवर्तन और महिला कृषक

जलवायु परिवर्तन के प्रभाव—सूखा, अतिवृष्टि, ताप लहर—कृषि को अस्थिर बना रहे हैं। इन परिस्थितियों में महिला कृषक की भूमिका और भी महत्वपूर्ण हो जाती है। फसल विविधीकरण, कम पानी वाली फसलें, समयानुकूल बुवाई, स्थानीय संसाधनों का उपयोग—इन सबमें महिलाएँ अग्रणी भूमिका निभा कर जोखिम घटाती हैं।। उनका अनुभव और सतर्कता खेती को जोखिमों से बचाने में सहायक होती है।

तालिका 4: जलवायु जोखिम और समाधान

जोखिम	प्रभाव	समाधान
सूखा	फसल हानि	मोटे अनाज, ड्रिप
अतिवृष्टि	जलभराव	उठी क्यारियाँ
ताप-लहर	उपज घटाव	बुवाई समय समायोजन

महिला कृषकों के सशक्तिकरण की दिशा में आवश्यक कदम

महिला कृषकों के सशक्तिकरण के लिए जरूरी है कि—

- उन्हें भूमि और संपत्ति में अधिकार मिले,
- कृषि प्रशिक्षण और विस्तार सेवाओं में उनकी प्राथमिक भागीदारी हो,
- महिला-अनुकूल तकनीकों और यंत्रों को बढ़ावा दिया जाए,
- बाज़ार से सीधा जुड़ाव और मूल्य संवर्धन के अवसर उपलब्ध हों,
- सरल भाषा में मौसम और कृषि सलाह पहुँचाई जाए।

भविष्य की खेती : महिला के साथ

भविष्य की खेती तभी टिकाऊ होगी, जब उसमें महिला कृषक की भागीदारी को सम्मान और समर्थन मिलेगा। महिला-नेतृत्व वाली खेती प्रणालियाँ न केवल उत्पादन बढ़ाती हैं, बल्कि पर्यावरण संरक्षण और सामाजिक समावेशन को भी मजबूत करती हैं। यह खेती को केवल व्यवसाय नहीं, बल्कि जीवन और प्रकृति से जुड़े सतत तंत्र के रूप में देखती हैं।

निष्कर्ष

महिला कृषक केवल खेत की श्रमिक नहीं हैं, वे खेती की योजनाकार, पोषण की संरक्षक और ग्रामीण अर्थव्यवस्था की आधारशिला हैं। जब महिला कृषक सशक्त होती है, तब परिवार स्वस्थ होता है, गाँव समृद्ध होता है और देश की खाद्य सुरक्षा मजबूत होती है। इसलिए महिला कृषकों को सम्मान, संसाधन और अवसर देना—सिर्फ सामाजिक दायित्व नहीं, बल्कि सतत कृषि, खाद्य सुरक्षा और उज्ज्वल भविष्य के लिए अनिवार्य है।

स्वस्थ नारी, सशक्त नारी: सोयाबीन के साथ

मनीषा सैनी, मनु यादव, अक्षय तालुकदार, अम्बिका राजेंद्रन एवं संजय कुमार लाल
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

वर्तमान काल की भागदौड़ भरी ज़िंदगी में महिलाओं का स्वास्थ्य विभिन्न प्रकार की चुनौतियों का सामना कर रहा है जिससे उनके स्वास्थ्य में कई तरह के बदलाव हो रहे है । इसके परिणाम स्वरूप महिलाओ में तरह तरह की बीमारियाँ हो रही है जिसमे मुख्यत: पोषण की कमी, हार्मोनल असंतुलन, एनीमिया, हड्डियों की कमजोरी, हृदय रोग, मधुमेह और रजोनिवृत्ति (मेनोपॉज़) से जुड़ी समस्याएँ आम होती जा रही हैं। इन बदलावों का एक महत्वपूर्ण कारण उनकी दिनचर्या का आहार भी है अगर महिलाये अपने रोजाना के आहार में प्रोटीनयुक्त पौष्टिक आहार शामिल करे तो बीमारियाँ कम हो सकती है। उदहारण के तौर पर भारत में लगभग 10% से 15% महिलाएं पीसीओडी की समस्या से जूझ रही हैं। यह समस्या शहरी क्षेत्रों में अधिक पाई जाती है, जहां जीवनशैली और आहार प्रतिरूप तेजी से बदल रहे हैं। सही आहार और स्वस्थ जीवनशैली के साथ पीसीओडी की समस्या को नियंत्रित किया जा सकता है, ऐसे में सोयाबीन एक ऐसा पौष्टिक आहार है जो महिलाओं के संपूर्ण स्वास्थ्य को बनाए रखने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है ।

पोषण का भंडार है सोयाबीन

सोयाबीन जो कि "सुन्हेरी बीन" के नाम से प्रसिद है, एक महत्वपूर्ण खाद्य पदार्थ और तिलहन फसल है। इसमें लगभग 40 प्रतिशत उच्च गुणवत्ता वाला प्रोटीन, आवश्यक अमीनो एसिड, कैल्शियम, आयरन, फॉस्फोरस, जिंक, फाइबर तथा विटामिन-B कॉम्प्लेक्स प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। सोयाबीन में पाये जाने वाले प्रोटीन की गुणवत्ता अंडे, दूध और मांस में पाए जाने वाले प्रोटीन से कहीं अधिक होती है, इसलिए सोयाबीन को 'गरीबों का दूध' भी कहा जाता है। क्युकि सोयाबीन में पोष्टिक आहार भरपूर मात्रा में पाया जाते है इसलिए इसको "शाकाहारी मांस" भी कहा जाता है जिससे इसका सेवन पूरी दुनियां में प्रचलित है। इसके अलावा इसमें आइसोफ्लेवोन्स नामक तत्व होते हैं, जो महिलाओं के स्वास्थ्य के लिए विशेष रूप से लाभकारी माने जाते हैं तथा यह कई तरह के रोगों के उपचार में काफी कारगर सिद्ध भी हुआ है। सोयाबीन के फायदे और संभावित जोखिमों को महिलाओ के स्वास्थ्य के लिए जानना महत्वपूर्ण है ताकि महिलाएं इसे सही तरीके से अपने आहार में शामिल कर सकें। इस लेख के माध्यम से हम महिलाओं में होने वाली विभिन्न बीमारियों और स्थितियों पर सोयाबीन के लाभकारी प्रभावों का विस्तृत विश्लेषण करेंगे।

सोयाबीन से महिलाओ में होने वाली बीमारियों में फायदे

1. **किशोरियों के लिए सोयाबीन**

   महिलाओं का किशोरावस्था में शरीर और हार्मोन का विकास बहुत तेज़ी से होता है। इसलिए इस समय संतुलित आहार लेना अत्यंत आवश्यक होता है। सोयाबीन शरीर की वृद्धि में सहायक होने के साथ-साथ एनीमिया से भी बचाता है और यह मासिक धर्म से जुड़ी कमजोरी को कम करता है।

2. **गर्भवती और धात्री महिलाओं के लिए लाभकारी**

   गर्भावस्था के दौरान महिलाओं को अधिक प्रोटीन, आयरन और कैल्शियम की आवश्यकता होती है। सोयाबीन भ्रूण के विकास में सहायता करता है यह माँ की शारीरिक कमजोरी और थकान को कम करता है और दूध उत्पादन में भी मदद करता है।

3. **ऑस्टियोपोरोसिस (हड्डियों की कमजोरी)**

   महिलाओं में ऑस्टियोपोरोसिस एक सामान्य समस्या है, खासकर रजोनिवृत्ति के बाद। सोयाबीन में कैल्शियम और मैग्नीशियम की उच्च मात्रा पाई जाती है, जो हड्डियों की मजबूती के लिए आवश्यक हैं। सोयाबीन का नियमित सेवन हड्डियों की क्षति को रोकता है और ऑस्टियोपोरोसिस के जोखिम को कम करता है। इसके अलावा, इसमें फाइटोएस्ट्रोजेन्स भी होते हैं। जो हड्डियों की घनत्व बढ़ाने में और हड्डियों के स्वास्थ्य को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

4. **रजोनिवृत्ति (मेनोपॉज)**

   रजोनिवृत्ति के दौरान महिलाओं में हारमोंस का असंतुलन हो जाता है और एस्ट्रोजन की कमी हो जाती है, जिससे गर्मी की लहरें, चिड़चिड़ापन, मूड बदलना, हड्डियों की कमजोरी और अवसाद जैसी अन्य समस्याएं उत्पन्न हो जाती हैं। सोयाबीन में मौजूद फाइटोएस्ट्रोजेन्स एव आइसोफ्लेवोन्स हार्मोन के संतुलन में मदद करते हैं तथा हड्डियों को मज़बूत बनाते है जिससे ऑस्टियोपोरोसिस का खतरा कम हो जाता है इसके सेवन से महिलाएं अधिक आरामदायक जीवन जी सकती हैं।

5. **हृदय रोग**

   हृदय रोगों का जोखिम महिलाओं में भी तेजी से बढ़ रहा है। सोयाबीन में स्वस्थ वसा और फाइबर होते हैं, जो कोलेस्ट्रॉल के स्तर को नियंत्रित रखते हैं और हृदय रोगों के जोखिम को

कम करते हैं। सोयाबीन में ओमेगा-3 फैटी एसिड होते हैं, जो हृदय को स्वस्थ रखते हैं, खराब कोलेस्ट्रॉल (LDL) को कम करते हैं और रक्तचाप को नियंत्रित करने में मदद करते हैं।

6. गठिया (ऑर्थराइटिस)

गठिया (ऑर्थराइटिस) एक और समस्या है जो महिलाओं में आम है। सोयाबीन में पाये जाने वाले एंटीऑक्सीडेंट और ओमेगा-3 फैटी एसिड में एंटी-इंफ्लेमेटरी गुण होते हैं, जो जोड़ों की सूजन और दर्द को कम करने में सहायक होते हैं। साथ साथ यह जोड़ो के स्वास्थ्य को बनाये रखने में मददगार साबित हुआ है।

7. एंडोमेट्रियोसिस

एंडोमेट्रियोसिस एक ऐसी स्थिति है जिसमें गर्भाशय के अंदरूनी ऊतक गर्भाशय के बाहर बढ़ने लगते हैं। सोयाबीन में फाइटोएस्ट्रोजेन्स महिलाओ के शरीर में हार्मोनल संतुलन को बनाए रखते हैं और एंडोमेट्रियोसिस के दर्द और असुविधा को कम करते हैं।

6. ब्रेस्ट कैंसर

ब्रेस्ट कैंसर महिलाओं में एक गंभीर चिंता का विषय है। कुछ शोधों से पता चला है कि सोयाबीन में मौजूद फाइटोएस्ट्रोजेन्स ब्रेस्ट कैंसर की कोशिकाओं की वृद्धि को रोकने में मदद कर सकते हैं। हालांकि यह अभी भी शोध का विषय है और व्यक्तिगत स्वास्थ्य स्थिति के आधार पर विशेषज्ञ की सलाह आवश्यक हैं।

8. मधुमेह (डायबिटीज)

सोयाबीन का ग्लाइसेमिक सूचांक कम होता है। इसमें मोजूद प्रोटीन और फाइबर रक्त शर्करा के स्तर को नियंत्रित रखने में मदद करते है और ऊर्जा के स्तर को बनाए रखते हैं, इसलिए मधुमेह से पीड़ित महिलाओं के लिए सोयाबीन का सेवन लाभकारी हो सकता है।

9. वजन नियंत्रण (ओबेसिटी) और सौंदर्य लाभ

सोयाबीन में प्रोटीन और फाइबर उच्च मात्रा में उपलब्ध होते है, जो भूख को कम करने और वजन को नियंत्रित रखने में मदद करते है। यह मेटाबॉलिज्म को बढ़ाता है और शरीर की चर्बी को कम करने में सहायक होता है। इसके एंटीऑक्सीडेंट गुण त्वचा को स्वस्थ और चमकदार बनाते हैं और बालों की मजबूती में सहायक होते हैं।

9. प्रजनन स्वास्थ्य

सोयाबीन में मौजूद पोषक तत्व और फाइटोएस्ट्रोजेन्स प्रजनन स्वास्थ्य को बेहतर बनाने में सहायक होते हैं। सोयाबीन में विटामिन और खनिज पदार्थों की प्रचुरता होती है, जो हार्मोन के संतुलन को बनाए रखने में मदद करते है और प्रजनन प्रणाली को स्वस्थ रखते है।

10. पोलिसिस्टिक ओवरी डिजीज (पीसीओडी)

पीसीओडी महिलाओं में एक आम स्वास्थ्य समस्या है, जो हार्मोनल असंतुलन के कारण होती है। यह समस्या कई बार वजन बढ़ने, अनियमित मासिक धर्म, चेहरे पर बालों की अत्यधिक वृद्धि और बांझपन जैसी समस्याओं को जन्म दे सकती है। इस समस्या का समाधान खोजने के लिए विभिन्न प्राकृतिक उपायों का सहारा लिया जा सकता है, जिनमें से एक है सोयाबीन का सेवन। सोयाबीन के सेवन से मासिक धर्म के चक्र को नियमित करने में मदद मिलती है।

सोयाबीन को आहार में कैसे शामिल करें

सोयाबीन का सेवन कई प्रकार, जैसे कि बीजों को अंकुरित करके सोया स्प्राउट, सलाद या सब्जी के रूप में किया जा सकता है क्योंकि अंकुरित बीजों में अधिक मात्रा में मिनरल्स और प्रोटीन्स पाए जाते है। भीगे हुए सोयाबीन के बीजों से सोया दूध निकाल के 'सोया मिल्क' और उससे सोया दही तथा पनीर बना कर 'सोया पनीर और टोफू' के रूप में भी कर सकते है। सोयाबीन का आटा गेहूं के आटे के साथ 1:1 के अनुपात में मिला कर "चपाती' तथा विभिन्न प्रकार के नास्ता एवं हलके भोजन तैयार करने के लिए किया जा सकता है। भारतीय शाकाहारी व्यंजनों में सोया चंक्स / बड़ी अथवा सोया-खली एक महत्त्वपूर्ण घटक है के रूप में भी प्रयोग कर सकते है । भुने हुए सोयाबीन के बीजों को नमकीन के रूप में खाया जा सकता है। मुख्यत्त: सोयाबीन के बीज से प्राप्त तेल, जो दुनिया भर में एक लोकप्रिय खाना पकाने में उपयोग किया जाता है। उपयोगिता के मामले में सोयाबीन का तेल देश में सर्वप्रथम है ।

सोयाबीन से संबंधित संभावित जोखिम

सोयाबीन स्वास्थ्य लाभों से भरपूर होने के बावजूद, यह जोखिम कारको से मुक्त नहीं है। सोयाबीन और सोया आधारित खाद्य पदार्थों से जुड़े कुछ जोखिम कारक इस प्रकार हैं

1. थायरॉइड समस्याए

सोयाबीन में पाये जाने वाली गोइट्रोजेन्स नामक योगिक थायरॉइड ग्रंथि के कार्य में बाधा डाल के थायरॉइड हॉर्मोन को प्रभावित कर सकता है। इसलिए थायरॉइड विकारों से पीड़ित महिलाओं को सोयाबीन का सेवन डॉक्टर की सलाह पर ही करना चाहिए।

2. पाचन समस्याएं

सोयाबीन में ओलिगोसैकराइड्स और ट्रिप्सिन इन्हिबिटर होते हैं, जो पाचन तंत्र में गैस और अपच की समस्या पैदा कर सकते हैं। हालांकि, फाइबर की उच्च मात्रा पाचन तंत्र को स्वस्थ रखने में भी मदद कर सकती है।

3. हार्मोन का असंतुलन:

सोयाबीन का अधिक सेवन से सोयाबीन में मौजूद

फाइटोएस्ट्रोजेन्स शरीर में हार्मोन के स्तर को प्रभावित कर सकते हैं। इससे महिलाओ की मासिक धर्म चक्र में गड़बड़ी और प्रजनन समस्याएं हो सकती हैं।

4. **एलर्जी:**

   कुछ महिलाओं को सोयाबीन से एलर्जी हो सकती है। यह त्वचा पर खुजली, सूजन और सांस लेने में कठिनाई जैसे लक्षण पैदा कर सकता है।

5. **फाईटिक एसिड:**

   सोयाबीन में फाईटिक एसिड होता है जो कुछ खनिजो, जैसे कि कैल्शियम, आयरन व जिंक के अवशोषण को बाधित कर सकते है।

सावधानियां और बचाव

1. **संतुलित सेवन:** सोयाबीन का सेवन संतुलित मात्रा में करना चाहिए। प्रतिदिन 25-30 ग्राम से अधिक सोयाबीन का सेवन न करें।
2. **विविध आहार:** अपने आहार में विभिन्न प्रकार के खाद्य पदार्थ शामिल करें। अन्य प्रोटीन स्रोतों जैसे दालें, डेयरी उत्पादों और नट्स का भी सेवन करें।
3. **नियमित जांच:** यदि आपको थायरॉइड या हार्मोनल समस्याएं हैं, तो डॉक्टर से नियमित जांच करवाएं और उनकी सलाह के अनुसार ही सोयाबीन का सेवन करें।
4. **प्राकृतिक सोयाबीन:** प्रसंस्कृत सोया उत्पादों से बचें और प्राकृतिक रूप से उपलब्ध सोयाबीन का सेवन करें।

निष्कर्ष

सोयाबीन न केवल एक सस्ता और सुलभ आहार है, बल्कि यह महिलाओं के लिए संपूर्ण पोषण और स्वास्थ्य सुरक्षा का माध्यम भी है। सोयाबीन महिलाओं के स्वास्थ्य के लिए कई मायनों में महत्वपूर्ण है जैसे कि हड्डियों को मजबूत बनाना, रजोनिवृत्ति के लक्षणों को कम करना, हृदय स्वास्थ्य को सुधारना, गठिया के लक्षणों से राहत दिलाना, एंडोमेट्रियोसिस और ब्रेस्ट कैंसर, पीसीओडी जैसी खतरनाक बीमारियों के उपचार में सहायक होता है। इस प्रकार यदि इसे संतुलित मात्रा में दैनिक आहार में शामिल किया जाए तो यह महिलाओं को स्वस्थ, सशक्त और आत्मनिर्भर बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। परन्तु इसका सेवन शुरू करने से पहले एक बार चिकित्सक से परामर्श अवश्य कर लें, ताकि आपकी स्थिति के अनुसार सही मात्रा और सेवन का तरीका निर्धारित किया जा सके।

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान में सरसों की गुणवत्ता प्रजनन के दो दशक: उपलब्धियां और भविष्य की चुनौतियां

यशपाल, स्नेहा अधिकारी, नविन्दर सैनी, सुजाता वासुदेव एवं डी.के. यादव
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

भारतीय सरसों: सबसे महत्वपूर्ण तिलहनी फसल

रेपसीड-सरसों ब्रासिका जाति की फसल है जिसमें छह खेती की जाने वाली प्रजातियां आती हैं: ब्रासिका रापा, ब्रासिका नाइग्रा, ब्रासिका ओलेरेसिया, ब्रासिका जन्सिया, ब्रासिका नेपस तथा ब्रासिका कैरिनाटा । इनमें भारतीय सरसों (ब्रासिका जन्सिया) भारत में रेपसीड-सरसों समूह की प्रमुख प्रजाति है जो कुल रकबे का 85% से अधिक हिस्सा रखती है। भारत एशिया के कुल रेपसीड-सरसों उत्पादन में लगभग 40% का योगदान देता है। यह फसल मुख्य रूप से राजस्थान, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, हरियाणा, पश्चिम बंगाल, असम और गुजरात में उगाई जाती है, जो कुल उत्पादन का 93% से अधिक तथा खेती क्षेत्र का 91% से अधिक देते हैं। रेपसीड-सरसों का भारत के कुल तिलहन उत्पादन में 24% हिस्सा है, जिससे यह सोयाबीन के बाद दूसरी सबसे बड़ी तिलहनी फसल है।

एरूसिक अम्ल और ग्लूकोसाइनोलेट्स: पोषण-विरोधी घटक

तेल की गुणवत्ता एक जटिल गुण है जो संग्रहण अवधि, स्वादिष्टता, पोषण मूल्य, खाना पकाने की उपयुक्तता और औद्योगिक उपयोग जैसे कई कारकों से प्रभावित होती है। वसीय अम्ल की संरचना और आवश्यक अमीनो अम्ल की मौजूदगी मुख्य रूप से खाने योग्य तेल के पोषण मूल्य को निर्धारित करते हैं। परंपरागत भारतीय सरसों की किस्मों के बीज तेल में एरूसिक अम्ल की मात्रा बहुत अधिक (40–50%) होती है, जो पोषण की दृष्टि से अवांछनीय है क्योंकि यह हृदय संबंधी समस्याओं से जुड़ा हुआ है। अधिक एरूसिक अम्ल प्रभावी रूप से चयापचय नहीं होता और इससे परिधीय रक्त वाहिका तंत्र में कमी, रक्त कोलेस्ट्रॉल में वृद्धि तथा रक्त के थक्का जमने के समय में कमी आती है।

दूसरी ओर, तेल-रहित सरसों की खली उच्च प्रोटीन (लगभग 40%) और संतुलित अमीनो अम्ल संरचना के कारण उत्कृष्ट पशुचारा है। एफ. ए. ओ. के आंकड़ों के अनुसार भारत देश सरसों की खली का विश्व का तीसरा सबसे बड़ा उत्पादक (9.255 मिलियन टन) है। लेकिन परंपरागत भारतीय सरसों में ग्लूकोसाइनोलेट्स की उच्च मात्रा (80–160 माइक्रो मोल /ग्राम तेल-रहित खली) के कारण यूरोपीय तथा अन्य विकसित बाजारों में इसका निर्यात सीमित है।

ग्लूकोसाइनोलेट्स सल्फर युक्त यौगिक हैं जो मायरोसिनेज एंजाइम द्वारा जल अपघटन (हाइड्रोलिसिस) के बाद थायोसायनेट, आइसोथायोसायनेट और नाइट्राइल जैसे सक्रिय मेटाबोलाइट उत्पन्न करते हैं। ये उप-उत्पाद थायरॉइड ग्रंथि के आकार, संरचना और कार्य को प्रतिकूल रूप से प्रभावित कर सकते हैं तथा यकृत और वृक्कों को भी नुकसान पहुंचा सकते हैं। इसके अलावा, परंपरागत सरसों की खली में उच्च ग्लूकोसाइनोलेट्स के कारण कड़वापन आता है जिससे उसकी स्वीकार्यता कम हो जाती है।

कैनोला प्रजनन: ऐतिहासिक अवलोकन

तेल और खली की गुणवत्ता में सुधार का सबसे महत्वपूर्ण मील का पत्थर कैनोला की विकास यात्रा है जिसकी शुरुआत कनाडा से हुई। द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान कनाडा सरकार ने घरेलू मांग पूरी करने के लिए रेपसीड की खेती शुरू की और पोलैंड (ब्रासिका रापा) तथा अर्जेंटीना (ब्रासिका नेपस) से बीज मंगवाए। अगले दो दशकों में ये प्रजातियां कनाडाई प्रेयरी क्षेत्र में अच्छी तरह अनुकूलित हो गईं।

वर्ष 1956 में रेपसीड तेल में उच्च एरूसिक अम्ल को लेकर चिंता हुई। इससे कनाडाई पादप प्रजनकों ने एरूसिक अम्ल कम करने का कार्य शुरू किया। गैस क्रोमैटोग्राफी के विकास ने फैटी अम्ल प्रोफाइल का सटीक विश्लेषण संभव बनाया। पहली सफलता 1961 में ब्रासिका नेपस और 1964 में ब्रासिका रापा में कम एरूसिक अम्ल वाले प्राकृतिक म्यूटेंट की खोज के रूप में मिली। 1968 में दुनिया की पहली कम-एरूसिक अम्ल वाली किस्में 'ऑरो' (ब्रासिका नेपस) और 'स्पान' (ब्रासिका रापा) जारी की गईं। फिर भी खली में उच्च ग्लूकोसाइनोलेट्स की समस्या बनी रही। 1967 में 'ब्रोनोव्स्की' नामक कम ग्लूकोसाइनोलेट्स वाला म्यूटेंट मिला जो विश्व भर में डबल-लो किस्में विकसित करने का एकमात्र स्रोत बना। 1974 में दुनिया की पहली "डबल-लो" (कैनोला) किस्म 'टावर' (ब्रासिका नेपस) और 1978 में 'कैंडल' (ब्रासिका रापा) जारी की गई। डॉ. बाल्डुर स्टेफांसन और डॉ. कीथ डाउनी को "कैनोला के जनक" कहा जाता है।

भारत के लिए ब्रासिका जन्सिया (भारतीय सरसों) उष्णकटिबंधीय और शुष्क जलवायु के कारण अधिक उपयुक्त और उत्पादक फसल है। कम एरूसिक अम्ल वाली ब्रासिका जन्सिया जीनोटाइप सबसे पहले 1980 में ऑस्ट्रेलिया में किर्क और ओरम ने खोजीं (ज़ेम 1 और ज़ेम 2) जिन्हें बाद में विश्व भर के प्रजनकों को वितरित किया गया।

"इंडोला" किस्मों का विकास: एक महत्वपूर्ण उपलब्धि

भारत में 1970 के दशक से ही एरुसिक अम्ल (<2%) और ग्लूकोसाइनोलेट्स (<30 माइक्रो मोल /ग्राम खली) को अंतरराष्ट्रीय मानक तक कम करने के प्रयास चल रहे हैं। इंडो-स्वीडिश (1975–1988), इंडो-कैनेडियन (1979–1994) तथा इंडो-ऑस्ट्रेलियन (2004–2010) सहयोग ने इन प्रयासों को बल दिया। इनके तहत ज़ेम 1, ज़ेम 2 सहित 30 विदेशी सिंगल-जीरो और कैनोला गुणवत्ता वाली लाइनें भारत लाई गईं। लेकिन ये लाइनें भारतीय परिस्थितियों में कम उत्पादन देने वाली थीं। इसलिए विदेशी दाता स्रोतों से कम एरुसिक और कम ग्लूकोसाइनोलेट्स गुणों को देशी किस्मों में स्थानांतरित करने पर जोर दिया गया।

वर्ष 1996-97 में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद ने तिलहन ब्रासिका गुणवत्ता सुधार के लिए "राष्ट्रीय नेटवर्क प्रोजेक्ट ऑन इम्प्रूवमेंट ऑफ ऑयलसीड ब्रासिका क्वालिटी" शुरू किया। इसके बाद सरसों प्रजनन में गुणवत्ता सुधार, "रेपसीड और सरसों पर अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान परियोजना" का मुख्य हिस्सा बन गया।

वर्ष 2004 में पहली कम-एरुसिक अम्ल वाली भारतीय सरसों की किस्म पूसा करिश्मा जारी की गई। इसके बाद भा. कृ. अनु. प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान ने क्षेत्र -II और क्षेत्र -III के लिए कई किस्में विकसित कीं: पूसा सरसों-21, 22, 24, 29, 30, 32, 34 आदि। भारत की पहली डबल जीरो (इंडोला) किस्म पूसा डबल जीरो सरसों-31 वर्ष 2017 में और उच्च उपज वाली पूसा डबल जीरो सरसों-33 वर्ष 2021 में जारी की गई। यह देखते हुए कि भारत देश, भारतीय सरसों (ब्रासिका जन्सिया) का विश्व में सबसे बड़ा उत्पादक है, लेखकों ने डबल जीरो ब्रासिका जन्सिया किस्मों को ब्रासिका नेपस से स्पष्ट रूप से अलग करने के लिए "इंडोला" शब्द का प्रस्ताव दिया है। पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, लुधियाना ने भी जी एस सी और आर एल सी श्रृंखला की सिंगल- जीरो तथा डबल जीरो किस्में और प्रथम डबल-जीरो संकर क़िस्म आरसीएच-1 विकसित की है।

वर्तमान में जारी गुणवत्ता वाली भारतीय सरसों की किस्में

डबल जीरो किस्में (एरुसिक अम्ल <2%, ग्लूकोसाइनोलेट्स <30 माइक्रो मोल /ग्राम खली)

क्र. सं.	क़िस्म	वर्ष	अधिसूचना संख्या	संस्तुति क्षेत्र	बीज उपज (किग्रा/हे)
1	पूसा डबल जीरो सरसों-36	2024	एस.ओ. 1560 (ई) दिनांक 26.03.2024	III	2049
2	पूसा डबल जीरो सरसों-35	2024	एस.ओ. 1560 (ई) दिनांक 26.03.2024	III	2148
3	पूसा डबल जीरो सरसों-33	2021	8 (ई) दिनांक 24.12.2021	II	2644
4	पूसा डबल जीरो सरसों-31	2018	एस.ओ. 1379 (ई) दिनांक 27.03.2018	II	2334

सिंगल- जीरो किस्में (केवल एरुसिक अम्ल <2%)

क्र. सं.	क़िस्म	वर्ष	अधिसूचना संख्या	संस्तुति क्षेत्र	बीज उपज (किग्रा/हे)
1	पूसा सरसों-34	2023	एस.ओ. 1056 (ई) दिनांक 06.03.2023	II	2609
2	पूसा सरसों-32	2021	एस.ओ. 500 (ई) दिनांक 29.01.2021	II	2713
3	पूसा सरसों-30	2013	एस.ओ. 2815 (ई) दिनांक 19.09.2013	III	1824

गुणवत्ता सरसों प्रजनन की सफलता के स्तंभ

राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय सहयोगात्मक परियोजनाओं के माध्यम से संस्थागत सहयोग ने भारत में गुणवत्ता सरसों प्रजनन को आगे बढ़ाने में निर्णायक भूमिका निभाई है। इंडो-स्वीडिश, इंडो-कनाडियन तथा इंडो-ऑस्ट्रेलियन परियोजनाओं जैसे सहयोगों ने ब्रासिका जन्सिया की ज़ेम-1, ज़ेम-2 जैसी विदेशी जर्मप्लाज्म तथा अन्य कैनोला-गुणवत्ता वाली लाइनों को भारत में लाने में मदद की। इन प्रयासों से भारतीय संवर्धनों में कम एरुसिक अम्ल और कम ग्लूकोसिनोलेट गुणों का समावेश हुआ तथा अंतरराष्ट्रीय मानकों को पूरा करने वाली किस्में विकसित हुईं। भारत की खेती की परिस्थितियों में शुरू में कम उपज की समस्या आई, फिर भी इन साझेदारियों ने प्रजनन रणनीतियों को सशक्त बनाया और स्थानीय आवश्यकताओं के अनुकूल उच्च गुणवत्ता वाली सरसों किस्मों का विकास किया।

1960-70 के दशक में गैस क्रोमैटोग्राफी के क्षेत्र में हुई तकनीकी प्रगति तेल गुणवत्ता प्रजनन में एक महत्वपूर्ण मील का पत्थर साबित हुई। इसने एरुसिक अम्ल, ओलिक अम्ल, लिनोलिक अम्ल तथा लिनोलेनिक अम्ल जैसे वसीय अम्ल का सटीक, तेज़ और विश्वसनीय विश्लेषण संभव बनाया। स्वचालित गैस क्रोमैटोग्राफी की उच्च नमूना क्षमता ने भारतीय कृषि अनुसंधान

संस्थान के गुणवत्ता सरसों प्रजनन कार्यक्रम की सफलता में अहम भूमिका निभाई।

तेल एवं खल की गुणवत्ता के लिए आण्विक मार्करों का उपयोग परम्परागत प्रजनन को पूरक बनाता है और कम एरूसिक अम्ल, ग्लूकोसिनोलेट गुणों की पहचान, अनुसरण तथा चयन अत्यधिक सटीकता से करता है। भारत सरकार के जैव प्रौद्योगिकी विभाग द्वारा प्रायोजित परियोजना "मार्कर सहायता चयन द्वारा डबल जीरो भारतीय सरसों का विकास" ने भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान में गुणवत्ता प्रजनन के लिए आण्विक मार्करों के उपयोग का मार्ग प्रशस्त किया। बाद में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के "आणविक प्रजनन पर कंसोर्टिया अनुसंधान परियोजना" से भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान के पौधा प्रजनकों को तेल-खल की गुणवत्ता के साथ-साथ सफेद रतुआ रोग प्रतिरोधी किस्में विकसित करने में मदद मिली। मार्कर-सहायता प्रजनन से विकसित उन्नत जीनोटाइप वर्तमान में रेपसीड और सरसों पर अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान परियोजना के अंतर्गत परीक्षण चरण में हैं।

सिंगल/डबल ज़ीरो भारतीय सरसों की गुणवत्ता और उत्पादकता बनाए रखने के लिए आनुवंशिक रूप से शुद्ध बीज की उपलब्धता अत्यंत महत्वपूर्ण है। अलगाव दूरी, रोगुइंग तथा रोग नियंत्रण जैसे कारक गुणवत्ता सरसों के बीज की शुद्धता बनाए रखने में निर्णायक रहे हैं।

गुणवत्ता सरसों प्रजनन एवं व्यावसायीकरण की भावी चुनौतियाँ

प्रारंभिक चरण में जारी की गई सिंगल ज़ीरो और डबल ज़ीरो किस्में छोटे दाने और सामान्य खेती में कम बीज/तेल उपज के कारण व्यावसायिक रूप से स्वीकार नहीं की गईं। पुसा सरसों-30 (उच्च उपज वाली मोटे दाने वाली सिंगल ज़ीरो भारतीय सरसों) के जारी होने से बड़ी सफलता मिली है। फिर भी, एरूसिक अम्ल और तेल की मात्रा के बीच नकारात्मक सहसंबंध के कारण गुणवत्ता सरसों में 1-2% कम तेल की मात्रा स्वाभाविक रूप से रहती है। इसी तरह डबल ज़ीरो किस्मों में अपेक्षाकृत छोटा दाना भी व्यावसायिक स्वीकार्यता में बाधा है। आधुनिक जीनोमिक उपकरण इन अवांछित कड़ी को तोड़कर व्यावसायिक रूप से सफल डबल ज़ीरो किस्में विकसित करने में कारगर सिद्ध हो सकते हैं।

ब्रासिका पौधों में ग्लूकोसिनोलेट्स प्राकृतिक रक्षा तंत्र का हिस्सा हैं। ग्लूकोसिनोलेट्स के एंजाइमेटिक अपघटन से आइसोथायोसायनेट्स, थायोसायनेट, नाइट्राइल्स आदि जैव-सक्रिय यौगिक निकलते हैं जिनका प्राकृतिक कीटनाशक के रूप में उपयोग संभव है (एफिड, नेमाटोड, फफूंद आदि के विरुद्ध)। कैनोला मानक तक ग्लूकोसिनोलेट्स कम करने से पौधे की स्व-रक्षा, विशेषकर भंडारण कीटों के प्रति, कम हो गई है। तिलहन ब्रासिका में कीटों के लिए सीमित रासायनिक नियंत्रण विकल्प होने से सावधानीपूर्वक प्रबंधन और आगे अनुसंधान की आवश्यकता बढ़ गई है।

भारत में इंडोला सरसों किस्मों के विकास और अपनाने में कई चुनौतियाँ हैं: उपभोक्ता जागरूकता की कमी, सहायक नीतिगत ढांचे का अभाव, तकनीकी बाधाएँ। भारत में सरसों की खेती मुख्यतः सीमांत भूमि पर कम निवेश और वर्षा-आधारित परिस्थितियों में होती है, जिससे जारी अधिकांश सिंगल ज़ीरो और इंडोला किस्मों की बीज एवं तेल उपज सीमित रहती है। वर्तमान में इंडोला खेती कुल सरसों-रेपसीड क्षेत्र का बहुत छोटा हिस्सा है। स्थानीय गुणवत्ता सरसों के विपणन में अलगाव की कोई व्यवस्था नहीं है और किसानों को इन किस्मों की खेती के लिए कोई अतिरिक्त मूल्य नहीं मिलता। कैनोला के भारी आयात जैसे प्रतिकूल व्यापारिक प्रथाएँ घरेलू गुणवत्ता सरसों के बाजार को प्रभावित करती हैं। न्यूनतम समर्थन मूल्य के माध्यम से मूल्य प्रीमियम देना तथा बाहरी आयात पर टैरिफ व गैर-टैरिफ अवरोध लगाना किसानों को प्रोत्साहित करने और उपभोक्ता हित सुरक्षित करने के लिए आवश्यक है।

आर्थिक सर्वेक्षण 2021-22 के अनुसार, शहरीकरण और अत्यधिक प्रसंस्कृत खाद्यों की ओर बढ़ते आहार के कारण वर्ष 2030 तक भारत का खाद्य तेल आयात सालाना 3.4% की दर से बढ़ेगा। मांग और आपूर्ति के बीच बढ़ते अंतर ने भारत को घरेलू आवश्यकता पूरी करने के लिए आयात पर अत्यधिक निर्भर बना दिया है। इंडोला-गुणवत्ता लक्षणों पर केंद्रित पौध प्रजनन कार्यक्रमों को प्राथमिकता देना इस अंतर को पाटने के लिए महत्वपूर्ण है। ऐसे प्रयासों के लिए संसाधन आवंटन उच्च गुणवत्ता वाले खाद्य तेल और खल की उपलब्धता सुनिश्चित करेगा तथा अर्थव्यवस्था में बड़ा योगदान देगा। इन प्रगतियों के साथ भारत स्वस्थ रेपसीड-सरसों तेल के उत्पादन में विश्व का प्रमुख योगदानकर्ता बनने की क्षमता रखता है।

जैविक रोग नियंत्रण: सतत फसल उत्पादन में महिला किसानों के लिए सुरक्षित और लाभकारी कृषि समाधान

विष्णु माया बस्याल, दीबा कामिल एवं एम एस सहारन
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

भारत में कृषि केवल आजीविका का साधन नहीं है, बल्कि ग्रामीण महिलाओं की परिवारिक, सामाजिक और आर्थिक पहचान का भी आधार है। परंतु रसायनिक कीटनाशकों और उर्वरकों के अत्यधिक उपयोग से न केवल फसलों को जोखिम है, बल्कि किसानों—विशेषकर महिला किसानों की स्वास्थ्य व सुरक्षा पर भी गहरा प्रभाव पड़ता है। इसी संदर्भ में जैव-नियंत्रण (Biocontrol) एक सुरक्षित, प्रभावी और लाभकारी कृषि समाधान के रूप में उभर रहा है, जो महिला किसानों को स्वास्थ्य-सुरक्षित खेती, लागत नियंत्रण और आर्थिक सशक्तिकरण की दिशा में मार्गदर्शित करता है।

जैव कीटनाशक/जैव-नियंत्रण क्या है?

जैव कीटनाशक प्राकृतिक, जैविक रूप से पाए जाने वाले उत्पाद हैं जिनका उपयोग विभिन्न रोगों, कृषि कीटों को नियंत्रित करने के लिए किया जाता है। जैव-नियंत्रण कृषि में उन लाभकारी जीवों और जैविक उत्पादों का उपयोग है, जिनसे रोग और कीट प्राकृतिक रूप से नियंत्रित होते हैं, जो रसायनों की अपेक्षा कम हानिकारक, अधिक टिकाऊ और पर्यावरण के अनुकूल होते हैं। जैविक नियंत्रण में कवक एवं जीवाणु दोनों प्रकार के जैविक रोग नाशक सूक्ष्मजीव प्रयोग में लाये जा रहें है, *इनमें ट्राइकोडर्मा हारजिएनम, ट्राइकोडर्मा विरिडि, एस्परजिलस नाइजर, बैसिलस सबटिलिस* एवं *स्यूडोमोनास फ्लोरेसेन्स* प्रमुख हैं।

जैव नियंत्रक के प्रमुख गुण एवं महत्व

- जैव- नियंत्रक को भंडारण, एक स्थान से दूसरे स्थान पर आसानी से स्थान्तरित किया जा सकता है।
- इनका बड़े पैमाने पर पालन तथा एकीकरण किया जा सकता है।
- इनको प्रयोगशाला में आसानी से तैयार किया जा सकता है।
- इनकी अपेक्षाकृत उच्च प्रजनन क्षमता होती है अतः अधिक मात्रा में उत्पादन किया जा सकता है।
- ये बड़े क्षेत्रों मे उपस्थित कीटों या रोग जनकों के नियंत्रण में सक्षम होते है।
- जैविक एजेंट में रोग नियंत्रक की अत्यधिक विस्तृत क्षमता होती हैं।
- ये रोग नियंत्रण की वैकल्पिक विधि हैं।
- इसके जैव उत्पाद की क्षमता बहुत विस्तृत, स्थिर और सरल होती है। विकसित प्रजातियाँ 10°-45° सें0 तापमान एवं 8 प्रतिशत नमी पर स्थिर रहती है।
- मानव स्वास्थ्य एवं पर्यावरण पर कोई दुष्प्रभाव नहीं पड़ता है।
- मृदा में कोई प्रदूषण नहीं होता है और न ही मृदा में रहने वाले अन्य लाभदायक जीवों पर कोई दुष्प्रभाव पड़ता है।
- जहां अन्य तरीके लागू नहीं हैं, वहां इसका उपयोग किया जा सकता है।
- चयनात्मक लक्ष्य जीव पर ही इसका प्रभाव होता है।
- जैविक एजेंट आत्मनिर्भर, आसान तथा अनुकूलन हैं।
- कार्रवाई की विविधता से ये एक महत्वपूर्ण विधि बन गई है।
- रोगजनकों में प्रतिरोध उत्प्रेरण की संभावना कम हो जाती है।
- प्रभावी लागत भी कम आती है।
- जैविक नियंत्रण का दीर्घकालिक प्रभाव होता है ।

रोग नियंत्रण की मुख्य क्रियाविधियाँ

मुख्य रूप से प्रतिजीविता, प्रतियोगिता, मायकोपरैसेटिज्म, कोशिका भित्ति के एंजाइम को कम करना और प्रतिरोध प्रेरित करना, आदि रोग नियंत्रण की मुख्य क्रियाविधियाँ हैं ।

प्रतिजीविता

कुछ कवक और जीवाणु इस क्रिया मे मुख्य भूमिका निभाते हैं। ये कवक और जीवाणु कम आण्विक भार के यौगिक या एक एंटीबायोटिक उत्पादित करते हैं जो दूसरे सूक्ष्मजीव पर सीधा प्रभाव डालते हैं और रोगजनक को पूर्ण रूप से समाप्त कर देते हैं । ये कम आण्विक भार के यौगिक या एंटीबायोटिक रोगकारकों के लिए विष का काम करते हैं । उदाहरण के लिए फेनजिन एंटीबायोटिक, *स्यूडोमोनास फ्लोरोसेंस* के द्वारा उत्पन्न होती है और गेंहू के रोगजनक *गुमेनोमाइसिस ग्रेमिनिस* किस्म *ट्रीट्रीसाई* को पूर्ण रूप से नियंत्रित करती है। कुछ जैव- नियंत्रक और उनके द्वारा उत्पन्न होने वाली एंटीबायोटिक का विवरण निम्न प्रकार है-

तालिका: जैव-नियंत्रक और उनके द्वारा उत्पन्न होने वाली एंटीबायोटिक

जैव-नियंत्रक	प्रभेद	उत्पन्न एंटीबायोटिक	लक्ष्य रोगजनक	फसल
एग्रोबेक्टीरियम रेडियोबेक्टर	के-84	एग्रोसीन 84	*एग्रोबेक्टीरियम ट्यूमिफेसीयन्स*	गुठलीदार फल और गुलाब
बेसिलस सबटिलस	के-84	इटयूरिन समूह	सभी कवक	विभिन्न फ़सलें
अरविनिया हर्बीकोला	EH 1087	लेक्टम	*अरविनिया अमायीलोवोरा*	रोसिएसी पौधे
ट्राइकोडर्मा हार्जियानम	ATCC 36042	पेप्टाईबोल एंटीबायोटिक	सभी कवक	विभिन्न फ़सलें
स्यूडोमोनास फ्लोरोसेंस	2-79	एन्ध्रानिलिक अम्ल	*गुमेनोमाइसिस ग्रेमिनिस* किस्म *ट्रीट्रीसाई*	गेहूं

प्रतिस्पर्धा / प्रतियोगिता

इस प्रक्रिया को अप्रत्यक्ष प्रक्रिया माना जाता है जिससे खाद्य पदार्थों की कमी के आधार पर रोगजनकों को बाहर किया जाता है। इस प्रकार के जैव- नियंत्रण मे जैव- नियंत्रक उस पोषक तत्व की मात्रा में कमी कर देते हैं जिसके लिए रोगजनक पौधों पर आक्रमण करते हैं और इस प्रकार, जैव-नियंत्रक प्रतिनिधि और रोगजनक के बीच एक प्रतिस्पर्धा होती है और रोगजनकों को बाहर कर दिया जाता है।

परजीविता

इस प्रक्रिया में एक जीव दूसरे को भोजन के रूप में प्रत्यक्ष रूप से उपयोग करता है। उदाहरण के तौर पर वे कवक जो अन्य कवक पर परजीवी होते हैं, आमतौर पर उन्हें कवक परजीवों के रूप में संदर्भित किया जाता है। इस प्रक्रिया के दौरान जैव नियंत्रक प्रतिनिधि जीव के शरीर से छिपकर उसकी बाहरी परत को कुछ प्रतिजैविक पदार्थों द्वारा गलाकर उसका सारा पदार्थ उपयोग में ले लेता है, जिससे रोग कारक जीव नष्ट हो जाता है।

सफल जैव- कीटनाशक संरूपण के लिए आवश्यकताएँ

1. प्रतिस्पर्धा करने और बने रहने में सक्षम।
2. उपनिवेश और प्रसार करने में सक्षम।
3. पौधे और पर्यावरण के लिए गैर रोगजनक होना चाहिए।
4. उत्कृष्ट स्वः जीवन होना चाहिए।
5. सस्ती होनी चाहिए।
6. बड़ी मात्रा में उत्पादन करने में सक्षम होना चाहिए।
7. जीवन क्षमता बनाए रखने में सक्षम।
8. वितरण और अनुप्रयोग विधियों को उत्पाद स्थापना का समर्थन करना चाहिए।

भारत में टिकाऊ और पर्यावरण-अनुकूल कृषि की बढ़ती आवश्यकता के कारण बायोएजेंट (जैव-नियंत्रण कारक) का बाज़ार तेज़ी से विकसित हो रहा है। रासायनिक कीटनाशकों के दुष्प्रभाव, खाद्य सुरक्षा को लेकर बढ़ती जागरूकता और जैविक खेती को प्रोत्साहन मिलने से बायोएजेंट्स की माँग लगातार बढ़ रही है।

जैव नियंत्रकों को प्रयोग करने की विधियाँ

बीजोपचार विधि: इस विधि में 10 ग्राम पाउडर प्रति किलोग्राम बीज उपचारण के लिये उपयोग में लेते है। सबसे पहले जैव नियंत्रक के पाउडर का पानी में घोल लेते हैं, फिर बीज को इस घोल में डाल देते हैं, जिससे पूरा बीज अच्छी तरह से पाउडर द्वारा उपचारित हो जाता है। पानी की इतनी मात्रा रखते हैं, कि बीज उपचारण के बाद घोल न बचे। चिकने बीजों जैसे मटर, अरहर, सोयाबीन आदि के उपचारण के लिये घोल में कुछ चिपकने वाला पदार्थ जैसे गोंद, कार्बोक्सी मिथाइल सेलुलोज आदि मिला देते हैं, जिससे जैव नियंत्रक बीज से अच्छी तरह चिपक जाये। इसके बाद उपचारित बीज को छायादार फर्श पर फैलाकर एक रात के लिये रख देते है और अगले दिन इनकी बुआई करते हैं।

छिड़काव विधि: इस विधि में 5-10 ग्राम पाउडर प्रति लीटर पानी के हिसाब से घोल बना लेते हैं और मशीन (स्प्रेयर) द्वारा छिड़काव कर सकते हैं। अगर, जैव नियंत्रकों का छिड़काव बीमारी आने से पहले किया जाता है तो ये ज्यादा प्रभावकारी सिद्ध हो सकते हैं।

पौध उपचारण विधि: इस विधि में पौधों को पौधशाला से उखाड़कर उनकी जड़ को पानी से अच्छी तरह साफ कर लेते हैं। फिर पौधों को जैव नियंत्रक घोल में आधा घंटा के लिये रख देते हैं। इस प्रकार खेतों में लगाने के पहले जड़ों को जैव नियंत्रक के घोल में उपचारित करते हैं। पौधा उपचारण मुख्यतः धान, टमाटर, बैगन, गोभी, मिर्च, शिमला मिर्च इत्यादि के लिये करते हैं।

मृदा उपचार: इस हेतु जैव नियंत्रक का पाउडर उपयोग में लाते हैं। इसके लिये 1 किलोग्राम पाउडर को 100 किलोग्राम कम्पोस्ट या गोबर की खाद में मिलाकर एक एकड़ खेत में बिखेरते हैं।

बूँद-बूँद सिंचाई विधि: 5-10 ग्राम पाउडर प्रति लीटर पानी के हिसाब से घोल बना लेते हैं और बूँद-बूँद सिंचाई द्वारा खेत में पौधों की जड़ों तक पहुंचते हैं।

महिला किसानों के लिए विशेष महत्व

- अधिकांश महिला किसान खेत में काम करते समय रसायनिक कीटनाशकों के सीधे संपर्क में आती हैं। इससे त्वचा, आँखें, सांस और प्रजनन स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव हो सकता है। जैव-नियंत्रण उत्पाद गैर जहरीले होते हैं, जिससे स्वास्थ्य जोखिम कम होता है और महिलाएँ सुरक्षित रूप से खेती कर सकती हैं।
- जैव-नियंत्रण उत्पाद अपेक्षाकृत सस्ते होते हैं और लंबे समय तक असर दिखाते हैं। इससे कीटनाशकों पर होने वाला खर्च घटता है और शुद्ध आय बढ़ती है।
- जैव-नियंत्रण से मिट्टी की उर्वरता बनी रहती है, लाभकारी सूक्ष्मजीव सुरक्षित रहते हैं और जल व पर्यावरण प्रदूषण नहीं होता—यह सतत खेती को बढ़ावा देता है।
- बीज उपचार, गोबर-खाद या कम्पोस्ट में ट्राइकोडर्मा मिलाना, या छिड़काव जैसे उपयोग के तरीके सरल हैं, जिन्हें महिलाएँ आसानी से सीखकर स्वयं कर सकती हैं।
- जैव-नियंत्रण अपनाने से महिलाएँ जैविक खेती की ओर बढ़ सकती हैं, जिससे उनके उत्पादों को बाज़ार में अधिक कीमत मिलती है।
- महिला किसान स्वयं सहायता समूह के माध्यम से जैव-कीटनाशक का स्थानीय स्तर पर उत्पादन और बिक्री कर सकती हैं, जिससे अतिरिक्त आय के अवसर बनते हैं।
- भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (ICAR) द्वारा नियमित रूप से महिला किसानों के लिए जैव- नियंत्रक के बड़े पैमाने पर उत्पादन पर व्यावहारिक प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं। इन प्रशिक्षणों में भाग लेकर महिला किसान तकनीकी दक्षता विकसित कर सकती हैं तथा जैव-नियंत्रण आधारित उत्पादों का निर्माण कर उन्हें व्यवसाय के रूप में आगे बढ़ा सकती हैं।

निष्कर्ष

जैव-नियंत्रण सिर्फ एक कृषि तकनीक नहीं, बल्कि महिला किसानों के जीवन में सकारात्मक बदलाव लाने का एक प्रभावी माध्यम है। यह उन्हें स्वास्थ्य-सुरक्षित खेती, लागत में कमी, व्यवसायिक अवसर और आत्मनिर्भरता प्रदान करता है। यदि हमारे गांवों में और अधिक महिला किसान इस पद्धति को अपनाएँ, तो न केवल खेती अधिक टिकाऊ होगी, बल्कि ग्रामीण अर्थव्यवस्था में महिलाओं की भूमिका और मजबूती से उभर कर आएगी।

राष्ट्रीय कृषि बाजार (ई-नाम): कृषि विपणन की समस्याओं के समाधान के लिए भारत सरकार द्वारा एक प्रयास

नरेंद्र मोहन सिंह, हरबीर सिंह, एम. बाला. सुबरमानियन एवं अलका सिंह
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

कृषि बाजारों में कृषि विपणन की समस्याओं को दूर करने के लिए भारत सरकार द्वारा नई योजनाएँ शुरू की गई जिसमें कृषि मंडी की स्थिति को सुधारने के लिए तथा 'एक राष्ट्र एक बाज़ार' की परिकल्पना को मूर्त रूप देने के लिए ई-नाम पोर्टल की शुरुआत की गई । यह एक इलेक्ट्रॉनिक कृषि पोर्टल है जो पूरे भारत में मौजूद कृषि उत्पाद विपणन समिति को एक नेटवर्क में जोड़ने का काम करती है। जो किसी भी राज्य में मौजूद कृषि बाजार को एक विशेष सॉफ्टवेयर की मदद से जोड़ता है। ई-नाम पोर्टल का मुख्य उद्देश्य कृषि उत्पादों को एक एकीकृत बाजार उपलब्ध करवाना है।

और कृषि विपणन से तात्पर्य उन समस्त विपणन कार्य और सेवाओं से है जिनके द्वारा कृषि वस्तुएं उत्पादक से अंतिम उपभोक्ता तक पहुँचती हैं। अर्थात कृषि विपणन के अंतर्गत आने वाली सभी सेवाएँ जैसे कि भंडारण, परिवहन, बिक्री, स्वामित्व परिवर्तन, वित्त, विज्ञापन इत्यादि, यदि समुचित रूप से चलती रहें तो कृषि उपज का उचित मूल्य सुनिश्चित किया जा सकता है। भारत में कृषि विपणन का इतिहास काफी पुराना है। प्राचीन समय में किसान अपनी उपज को ग्रामीण इलाकों के हाट बाजारों में बेचा करते थे। लेकिन समय बीतने के साथ-साथ पारदर्शी नियमों से चलने वाली कृषि उपज मंडियों का गठन हुआ और कृषि मंडी के रूप में किसानो को एक अच्छा विकल्प मिला। सदियों से कृषि व्यवसाय भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ रही है। कोविड-19 महामारी के दौर में भी कृषि विकास दर का सबसे अधिक रहना इस बात को पुनः प्रमाणित करता है कि हमारे यहाँ कृषि सिर्फ एक व्यवसाय ही नहीं अपितु जीवन यापन का एक महत्वपूर्ण अंग है। एक और जहाँ कृषि उत्पादन हर वर्ष नए कीर्तिमान स्थापित कर रहा है, वहीं दूसरी और किसानो की आय में उतनी तेजी से वृध्दि नहीं हो रही है जितनी होनी चाहिए थी। इसका एक प्रमुख कारण कृषि विपणन व्यवस्था में पायी जाने वाली अनियमित्ताएं है।

कृषि मंडी में व्यापारियों द्वारा की जाने वाली अनियमितताओं पर नियंत्रण

बाजार में व्यापारियों द्वारा की जाने वाली अनियमितताओं पर नियंत्रण के लिए भारत सरकार देश भर में नियमित कृषि बाजार की स्थापना कर रही है। नियमित मंडियां किसानों को उनकी उपज का सही मूल्य दिलाने में एक कारगर कदम है। इसके माध्यम से किसानों को उनकी उपज का सही मूल्य मिल पाता है। वर्तमान में कृषि बाजारों का विनियमन प्रत्येक राज्यों के कृषि उत्पाद विपणन अधिनियम के माध्यम से किया जाता है। जिसे कृषि उत्पादन बाजार समिति अधिनियम मंडी के नाम से जाना जाता है। लेकिन इसके बावजूद कृषि विपणन प्रणाली पूर्ण क्षमता से कार्य निष्पादन नहीं कर पायी। इन मंडियों का दायरा सीमित होता था जिसके कारण किसान अपनी फसल एक मंडी से दूसरी मंडी में ले जाने के लिए स्वतंत्र नहीं थे और कृषि उपज के विपणन में अनेक बाधाओं का सामना करना पड़ता था ।

कृषि मंडी में कृषि विपणन की मुख्य समस्याएं

i) कृषि मण्डियों में मूलभूत सुविधाओं की कमी

भारत की मण्डियों में किसानों को अपनी पैदावार को बेचने के लिये लंबे समय तक इंतजार करना पड़ता है। अपनी उपज को जल्द बेचने के लिये किसानों को दलालों की सहायता लेनी पड़ती है । ये कमीशन एजेंट इसी बात का अनुचित फायदा उठाकर किसी की पैदावार पर भारी लाभ कमाते हैं ।

ii) भण्डारों /गोदामों की कमी

कृषि उत्पाद के भण्डारण के लिए आवशयक भंडारगृह और शीतगृह की अभी भी पर्याप्त संख्या नहीं है । एक अनुमान के अनुसार प्रतिवर्ष 20 से 30 प्रतिशत उत्पादन बारिश अथवा चूहे इत्यादि से खराब हो जाता हैं ।

iii) नियमित बाजारों की कमी

भारत के सभी क्षेत्रों में बहुत-से अनियंत्रित बाजार हैं । इन बाजारों में उत्पादन को तोलने के मानक यन्त्रों एवं प्रशिक्षित स्टाफ की कमी हैं ।

iv) उपयुक्त परिवहन का अभाव

भारत के अधिकतर ग्रामीण क्षेत्रों में सड़कों की हालत बेहतर नहीं हैं, जिसके कारण फसल पैदावार को मण्डियों तक ले जाने में भारी कठिनाई आती है । इसके अलावा सभी किसानो के पास इतने संसाधन भी नहीं है कि वे समय से अपनी उपज मंडी में ले जा सके ।

v) बिक्री की कम मात्रा

अधिकतर छोटे तथा सीमांत किसान गरीब हैं इसलिये अपनी आवश्यकताओं की आपूर्ति के लिये उनको अपनी पैदावार को कटाई उपरान्त तुरंत बेचना पड़ता है जिस कारण उनको

सस्ते दाम ही मिल पाते हैं। यदि सभी छोटे किसान एक समूह बनाकर अपनी उपज का विक्रय करें तो परिवहन लगत भी कम आएगी और फसल के अच्छे दाम भी मिलेंगें।

vi) मध्यस्तों की भूमिका

जैसा कि ऊपर बताया गया है भारत की कृषि मण्डियों में भारी संख्या में मध्यस्त पाये जाते हैं । उत्पादन की बिक्री पर अधिक लाभ इन मध्यस्तों या दलालों को होता है । किसानो के मुकाबले बाजार स्थिति की अधिक जानकारी होने के कारण ये बिचोलिये अपनी शर्तों पर कृषि उपज खरीदने में सफल हो जाते हैं।

vii) फसलों के उत्पादकों के ग्रेडिंग का अभाव

कृषि उत्पादकों को ग्रेडिंग न करने से किसान को उचित मूल्य नहीं मिल पाता । कृषि उपज को श्रेणीकरण करने के उपरांत बेचने पर अधिकतम मूल्य प्राप्ति की संभावना बढ़ जाती है।

viii) उपयुक्त वित्तीय सहायता संस्थाओं की कमी

उपयुक्त वित्तीय सहायता की संस्थाएं न होने के कारण किसान प्रायः भारी ब्याज पर साहूकारों से कर्जा लेता है । ऐसे ऋणी किसानों को अपने उत्पादन को सस्ते मूल्य पर साहूकारों को बेचना पड़ता है ।

ix) बेसिक मूलभूत अवसंरचनों की कमी

वर्ष 2017 की 'डबलिंग फार्म र्स इनकम रिपोर्ट' के अनुसार ऐ.पी.एम.सी. के तहत मौजूदा 6,676 प्रमुख बाज़ारों तथा उप-बाज़ारो में बुनियादी अवसंरचनों की कमी है तथा भारत में अभी भी 3,500 से अधिक अतिरिक्त थोक बाज़ारों की आवश्यकता है। 23,000 ग्रामीण आवधिक बाज़ार या हाट भी लंबे समय से उपेक्षा का सामना कर रहे हैं। इसलिये कृषि बाज़ारों के बुनियादी ढाँचे के लिये आवंटित राशि का उपयोग पूरी तरह से भौतिक विपणन पारिस्थितिकी तंत्र के निर्माण के लिये किया जाना चाहिये।

इन्ही समस्याओं से निजात दिलाने के लिए केंद्रीय सरकार ने अनेक नीतिगत निर्णय लिए हैं जिससे की कृषि उपज के विपणन में आने वाली समस्याओं से छुटकारा मिल सके । वर्तमान समय में कृषि विपणन में भी धीरे-धीरे नई तकनीकों का समावेश हो रहा है। इन्ही नयी तकनीकियों एवं नीतिगत पहल की जानकारी यहाँ दी जा रही है ।

नीतिगत पहल

कृषि उत्पादन भंडारों का निर्माण करना

भारत में सेण्ट्रल वेयरहाऊसिंग कॉरपोरेशन की स्थापना 1957 में की थी । इसका उद्देश्य कृषि उत्पदनों को रखने के लिये गोदाम और भंडार गृहों का निर्माण करना था । राज्य सरकारों ने बहुत-से अपने गोदामों का भी निर्माण किया था । भण्डारण क्षमता बढ़ाने के लिए "ग्रामीण गोदामों का निर्माण" योजना 2001 से की जा रही है। यह योजना नाबार्ड एवं एन.सी.डी.सी. के माध्यम से कियान्वित की जा रही है ।

बाजार के मूल्यों की जानकारी से अवगत कराना

कृषि उत्पनों के मूल्यों की जानकारी आकाशवाणी तथा दूरदर्शन के द्वारा किसानों को लगातार दी जा रही है जिससे की वे अपने उत्पाद विक्रय सही समय और मूल्य पर कर सकें।

ग्रेडिंग एवं मानकीकरण पर जोर

भारत सरकार में आटा, घी, मक्खन, अण्डे इत्यादि के मानकीकरण का प्रावधान कानून के द्वारा किया है । जिन वस्तुओं का मानकीकरण किया जाता है उन पर एगमार्क की मोहर कृषि विपणन विभाग के द्वारा लगाई जाती है । इसके अतिरिक्त केन्द्रीय गुणवत्ता नियन्त्रण प्रयोगशाला, नागपुर में स्थापित की है । साथ ही साथ देश के अन्य भागों में आठ अन्य केन्द्र भी एगमार्क के नमूनों की जाँच के लिये स्थापित किये हैं ।

सहकारी बाजार समितियों का गठन करना

यह सहकारी समितियां किसानों की उपज को अच्छे दामों पर बेचने में मदद करती है और किसानों को ब्याज की सस्ती दरों पर रुपया उधार देने का प्रबंध भी करती हैं ।

कृषि उत्पादों के बोर्ड की स्थापना

कृषि की विशेष वस्तुओं के बोर्ड स्थापित करना- जैसे, रबड चाय काफी तम्बाकू, गर्म मसालों, नारियल तिलहन तथा फलों के बोर्ड तथा कृषि उत्पादनों का मानकीकरण करना तथा कृषि व्यापार को बढ़ावा देना ।

राष्ट्रीय कृषि बाजार (ई-नाम)

ई-नाम (इलेक्ट्रॉनिक राष्ट्रीय कृषि बाजार) एक अखिल भारतीय ऑनलाइन ट्रेडिंग प्लेटफॉर्म है, जिसे भारत सरकार ने अप्रैल 2016 में शुरू किया था। इसका उद्देश्य कृषि उपज के लिए एक एकीकृत राष्ट्रीय बाजार का निर्माण करना है। यह प्लेटफॉर्म स्मॉल फार्मर्स एग्रीबिजनेस कंसोर्टियम (SFAC) द्वारा संचालित किया जाता है और देशभर की मौजूदा कृषि उपज मंडियों (APMCs) को आपस में जोड़ता है, जिससे किसान, व्यापारी और खरीदार पारदर्शी और प्रभावी ढंग से व्यापार कर सकें। ई-नाम किसानों को कई लाभ प्रदान करता है। पारंपरिक रूप से किसान अपनी उपज केवल स्थानीय मंडियों में बेचने तक सीमित थे, जहां उन्हें अक्सर मूल्य में हेरफेर और पारदर्शिता की कमी का सामना करना पड़ता था। ई-नाम के माध्यम से अब वे देशभर के बाजारों तक पहुंच प्राप्त कर सकते हैं, विभिन्न मंडियों के दामों की तुलना कर सकते हैं और अपनी उपज के लिए सर्वोत्तम मूल्य प्राप्त कर सकते हैं। यह प्लेटफॉर्म स्वस्थ प्रतिस्पर्धा को बढ़ावा देता है, बिचौलियों पर निर्भरता कम करता है और बेहतर मूल्य निर्धारण सुनिश्चित करता है।

चित्र : राज्य एवं एयूटीएस अनुसार ई–नाम प्लेटफॉर्म पर एपीएमसी कृषि मंडियो का नेटवर्क

इसके अलावा, ई-नाम इलेक्ट्रॉनिक भुगतान, गुणवत्ता परीक्षण और ग्रेडिंग जैसी सुविधाएं भी प्रदान करता है, जिससे पारदर्शिता और विश्वास बढ़ता है। यह किसानों को मंडियों में बार-बार जाने से बचाता है, जिससे समय और परिवहन लागत में भी कमी आती है। कुल मिलाकर, ई-नाम भारतीय कृषि क्षेत्र के लिए एक क्रांतिकारी पहल है, जो किसानों को तकनीक से सशक्त बनाता है, बेहतर बाजार से जोड़ता है और कृषि विपणन प्रणाली को और अधिक संगठित, पारदर्शी और कुशल बनाता है।

किसान रेल योजना भारत सरकार की एक नई पहल

किसान रेल योजना के तहत किसानो की जल्दी ख़राब होने वाली फसलों/सब्जियों के मालवाहन के लिए सार्वजनिक एवं निजी भागीदारी (पीपीपी) के द्वारा शीत भंडारण के साथ-साथ किसानों को फसलों के लिए परिवहन की व्यवस्था की जाएगी। किसान रेल योजना भारत सरकार की एक नई पहल है जिसके माध्यम से रेलवे किसानों के लिए रेलगाडियाँ अगस्त 2020 से चला रही है। भारतीय रेलवे द्वारा फल और सब्जियों के माल वाहन के लिए ये नई रेलगाडियाँ चलायी जा रही है। किसान रेल योजना के अनुसार सबसे पहली रेलगाड़ी महाराष्ट्र के देवलाली से बिहार के दानापुर के बीच चलायी गयी थी ।

किसान रथ योजना भारत सरकार का एक नया प्रयास

यह मोबइल ऐप किसानो को समय पर एवं उचित किराये पर परिवहन साधन उपलब्ध कराने का एक बहुत ही अच्छा विकल्प है। यह ऐप गूगल प्ले स्टोर पर उपलब्ध है जिसमें किसान भाई अपना पंजीकरण कराकर अपने आस पास उपलब्ध परिवहन संसाधनों का उपयोग करने में सक्षम होंगे। साथ ही यदि किसान के पास अपना परिवहन साधन है तो वे इसका पंजीकरण कराकर कृषि उपज की ढुलाई से अतिरिक्त आय अर्जित कर सकते हैं।

राष्ट्रीय कृषि बाजार (ई-नाम) से संबंधित नवीनतम जानकारी (2025)

- 2025 तक ई-नाम प्लेटफॉर्म से 1,300 से अधिक ए.पी.एम.सी. (APMC) मंडियाँ जोड़ी जा चुकी हैं।
- अब तक ई-नाम पोर्टल पर 2 करोड़ से अधिक किसान, 2 लाख से अधिक व्यापारी, और 1 लाख से अधिक कमीशन एजेंट पंजीकृत हो चुके हैं।
- किसानों के लिए भाषाई इंटरफेस (कई भारतीय भाषाओं में) और मोबाइल ऐप सुविधा भी उपलब्ध है।
- हाल ही में, वर्चुअल मंडियों की अवधारणा को और मजबूत किया गया है जिससे किसान घर बैठे फसल की बिक्री कर सकते हैं।
- भुगतान प्रक्रिया को तेज और पारदर्शी बनाने के लिए ई-नाम में ई-भुगतान प्रणाली को भी जोड़ा गया है।

केंद्रीय बजट 2024-25 में ई-नाम योजना के लिए ₹2,000 करोड़ का प्रावधान किया गया है। इस बजट का उपयोग ई-नाम प्लेटफॉर्म के विस्तार, तकनीकी उन्नयन, और डिजिटल बुनियादी ढांचे को सुदृढ़ करने के लिए किया जा रहा है। ई-नाम योजना भारत के किसानों को एक डिजिटल और पारदर्शी बाजार प्रणाली से जोड़कर उन्हें सशक्त बना रही है। यह योजना न केवल किसानों की आय बढ़ाने में सहायक है, बल्कि कृषि विपणन प्रणाली को आधुनिक, सुलभ और न्यायसंगत बनाने में भी एक मील का पत्थर साबित हो रही है।

कृषि विपणन सूचना के कुछ मुख्य स्रोत

राष्ट्रीय कृषि बाजार : https://www.enam.gov.in/web/

नेशनल कमोडिटी एवं डेरीवेटिव एक्सचेंज (वायदा बाजार): https://www.ncdex.com/

आंवला मूल्य संवर्धन: स्वास्थ्य और समृद्धि

कविता सिंह [1], एल. एन. यादव [1] एवं राजीव कुमार सिंह [2]

[1] कृषि विज्ञान केन्द्र (भा.कृ.अनु.प.) शिकोहपुर, गुरुग्राम

[2] भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

आंवले के इम्युनिटी बढ़ाने वाले गुणों के कारण कोरोना महामारी के दौरान आंवला उत्पाद की भारी मांग रही है। आंवला फल को आयुर्वेद चिकित्सा में सर्वोपरि स्थान देकर इसे अमृत फल की उपाधि दी गयी है। इसमें प्रचुर मात्रा में विटामिन-सी के साथ अन्य पोषक तत्व जैसे कार्बोहाइड्रेट, रेशा, लोहा, कैल्शियम, फॉस्फोरस और अन्य विटामिन भी होते हैं।

आंवले का फल खाने में कसैला होने के कारण फल के रूप में उन जगहों पर भी कम प्रचलित है जहाँ इसका उत्पादन बहुतायत में होता है। किन्तु आंवले में मूल्य संवर्धन कर उसके विभिन्न उत्पाद बनाकर इसकी ग्राह्यता को बढ़ाया जा सकता है। व्यवसायिक स्तर पर आंवले से अचार, कैंडी, मुरब्बा, जूस, पाउडर, चूर्ण, लड्डू, बर्फी व च्यवनप्राश आदि बनाये जा सकते हैं।

प्रसिद्ध किस्में और पैदावार

बनारसी: बनारसी एक शीघ्र पकने वाली किस्म है, जो मध्य अक्टूबर से मध्य नवम्बर तक फल देती है। इसके फलों का आकार बड़ा, औसत भार लगभग 48 ग्राम, छिलका मुलायम होता है और फल स्टोर करने योग्य नहीं होते। यह शीघ्र पकने वाली, उच्च उपज देने वाली किस्म के रूप में जानी जाती है। अन्य किस्मों की तुलना में इसका गूदा कम रेशेदार और कम कसैला होता है। इसका उपयोग जैम और अन्य प्रसंस्कृत उत्पादों के उत्पादन के लिए किया जा सकता है। इस किस्म में लगभग 1.4% रेशा पाया जाता है। इसकी औसत पैदावार लगभग 120 किलो प्रति वृक्ष होती है।

कृष्णा (नरेंद्र आंवला-5): यह भी जल्दी पकने वाली किस्म है, जो मध्य अक्टूबर से मध्य नवम्बर तक पक जाती है। इस किस्म के फल आकार में सामान्य से बड़े, भार लगभग 44.6 ग्राम, छिलका मुलायम तथा हल्की धारियों वाला होता है। इस किस्म में लगभग 1.4% रेशा पाया जाता है। इसकी औसत पैदावार लगभग 123 किलो प्रति वृक्ष होती है।

नरेंद्र आंवला-9: यह भी एक जल्दी पकने वाली किस्म है, जो मध्य अक्टूबर से मध्य नवम्बर में पक जाती है। इसके फल बड़े आकार के, औसत भार लगभग 50.3 ग्राम, लंबाकार तथा छिलका मुलायम और पतला होता है। इस किस्म में रेशे की मात्रा 0.9% होती है और विटामिन सी की मात्रा सबसे ज्यादा 100 ग्राम होती है। इससे जैम, जेली और कैंडीज आदि बनाने के लिए प्रयोग किया जाता है।

नरेंद्र आंवला-10: यह भी जल्दी पकने वाली किस्म है, जो मध्य अक्टूबर से मध्य नवम्बर में पक जाती है। इसके फल मध्यम से बड़े आकार एवं चपटे-गोल होते हैं। इनका छिलका खुरदुरा, पीले-हरे रंग का होता है और गूदा सफेद-हरा, थोड़ा रेशेदार, रसदार और अत्यधिक कसैला होता है। इसमें उच्च विटामिन सी (लगभग 516.40 मिलीग्राम/100 ग्राम) और मध्यम फाइबर मात्रा पाई जाती है। इसके फल में 1.5% रेशे की मात्रा होती है। ये फल अच्छे गुणवत्ता वाले होते हैं तथा ये नेक्रोसिस के प्रति मध्यम प्रतिरोधी हैं, जिससे ये प्रसंस्करण के लिए उपयुक्त हैं।

फ्रांसिस: यह मध्यम समूह की फसल है, जो मध्य नवम्बर से मध्य दिसम्बर तक होती है। इसके फल बड़े आकार के, भार 45.8 ग्राम, और रस-दार-पक्के होते हैं। इसके रेशे की मात्रा 1.5% होती है। इस किस्म का छिलका मोटा और सख्त होता है, क्योंकि इसकी शेल्फ लाइफ लंबी होती है। फ्रांसिस किस्म प्रसंस्करण के लिए अत्यधिक उपयुक्त है और इसे मूल्यवर्धित उत्पाद जैसे कि कैंडी, पाउडर और जूस के निर्माण के लिए पसंद किया जाता है।

नरेंद्र आंवला-7: यह मध्यम समूह की फसल है, जो मध्य नवम्बर से मध्य दिसम्बर तक होती है। इसके फल बड़े आकार के, भार 44 ग्राम, और हरे-रंग के होते हैं। फल का आकार थोड़ा शंक्वाकार होता है। यह नेक्रोसिस से मुक्त है। यह प्रसंस्करण के लिए अत्यधिक उपयुक्त है। इसमें औसत फल का वजन एकल शाखाओं के स्टॉक के समान होता है। इसमें शर्करा 9-9.45% और अम्ल-2.15% होती है। विटामिन सी-527.00 मिलीग्राम/100 ग्राम होता है। इसमें रेशे की मात्रा 1.5% होती है।

कृष्णा / नरेंद्र आंवला-4: यह मध्यम समूह की फसल है, जो मध्य नवम्बर से मध्य दिसम्बर तक होती है। इसका उत्पादन भारी होता है तथा पकने के समय फल का आकार बड़ा होता है। इसके फल का भार 30.2 ग्राम, रेशे 1.5% होते हैं। प्रोटीन, फास्फोरस और आयरन जैसे खनिजों की अच्छी उपस्थिति इसे एक उच्च गुणवत्ता वाली फल किस्म बनाती है। कैल्शियम एवं अन्य किस्मों की तुलना में अधिक होता है, जिससे यह उपभोग एवं प्रसंस्कृत खाद्य सामग्री और औषधीय उपयोगों के लिए अधिक उपयुक्त होती है। इस किस्म की औसत पैदावार 121 किलो प्रति पेड़ होती है।

नरेंद्र आंवला-6: यह मध्यम समूह की फसल है, जो मध्य नवम्बर से मध्य दिसम्बर तक होती है। इसके फल मध्यम आकार के, भार 38.8 ग्राम, इसमें रेशे की मात्रा सबसे कम 0.8% होती है। इसमें विटामिन सी की मात्रा 100 ग्राम और फाइबर की मात्रा सबसे कम होती है। इसे जैम और कैंडीज बनाने के लिए प्रयोग किया जाता है।

चक्कैया: यह देरी से पकने वाली किस्म है जो मध्य दिसंबर से मध्य जनवरी में पकती है। इसके फल मध्यम आकार के, भार 33.4 ग्राम, इसमें 789 मि.ग्रा. प्रति 100 ग्राम विटामिन सी की मात्रा, 3.4% पेक्टिन और 2% रेशा होता है। इसे अचार और शुष्क टुकड़े बनाने के लिए प्रयोग किया जाता है।

1. आंवला जूस

सामग्री: आंवला, पोटेशियम मेटाबाइस्लफाइट

विधि: आंवले को साफ पानी से धोकर कद्दूकस कर लें या आंवला शरेडिंग मशीन से कद्दूकस कर लें। इसके बाद आंवला शरेड (कसे हुए आंवले) को किसी साफ कपड़े की थैली में डालकर दोनों हाथों से दबाकर व घुमाकर जूस को किसी साफ शीशे के बर्तन या प्लास्टिक आदि में निकाल लें। वाणिज्यिक स्तर पर जूस निकालने के लिए हाइड्रोलिक प्रेस का प्रयोग किया जा सकता है। इसके बाद जूस को कपड़े से छानकर 90°C तक गर्म करके और फिर ठंडा करके ही पोटेशियम मेटाबाइस्लफाइट (1 ग्राम प्रति लीटर जूस) मिलाकर किसी साफ मुँह की उबली व सूखी बोतल में भरकर सील बंद कर दें। जूस की बोतलों को किसी सूखे व कम तापमान वाले (5–10° सेल्सियस) स्थान पर रख दें। जूस निकालने के बाद बचे हुए आंवला शरेड को धूप या ड्रायर में सुखा लें और फिर मिक्सी में पीसकर उसे बोतल में भरकर रख दें।

2. आंवला पाउडर

सामग्री: आंवला

विधि: आंवले को साफ पानी से धोकर कद्दूकस कर लें या आंवला शरेडिंग मशीन से कद्दूकस कर लें। कसे हुए आंवले को धूप या ड्रायर में तब तक सुखाएँ कि वे पूरी तरह सूख जाएँ। सूखे हुए आंवले को मशीन से पीसकर बारीक पाउडर बना लें। एक किलो आंवले से करीब 100–110 ग्राम पाउडर बनेगा।

3. आंवला मुरब्बा

सामग्री: 1 किलो आंवला, 1.5 किलो चीनी, 60 ग्राम नमक, 1 ग्राम पोटेशियम मेटाबाइस्लफाइट प्रति किलो मुरब्बा।

विधि: आँवले को साफ पानी से धोकर 2 प्रतिशत नमक के घोल के पानी में (20 ग्राम नमक प्रति लीटर पानी) 2-3 दिन तक डुबोकर रखें। पानी रोज बदल दें, जिससे आँवले का कसैलापन दूर हो जाए। तीसरे दिन नमक का पानी फेंककर आँवले को धोकर स्टील के चाकू से काटें। बीज और आँख पर उबालकर आँवले को पानी से बाहर निकालकर सुखा लें। लगभग आधा लीटर पानी में आधा किलो चीनी डालकर एक तार की चाशनी बना लें और आंच कम कर उसमें आँवले को रातभर के लिए छोड़ दें। आँवला पानी छोड़ता है जिससे चाशनी पतली हो जाती है। अतः दूसरे दिन चाशनी में से आँवले को बाहर निकालकर चाशनी में आधा किलो चीनी और डालकर फिर से एक तार की चाशनी बना लें। चाशनी ठंडी करके उसमें आँवले को रातभर के लिए छोड़ दें। तीसरे दिन फिर यही प्रक्रिया दोहराएँ। अब आधा किलो चीनी के साथ खटाईयाँ होने पर उसे किसी स्वच्छ, साफ और सूखे जार में भरकर उसमें पोटैशियम मेटाबाइसल्फाइट मिला देते हैं।

4. आँवला अचार

सामग्री: 1 किलो आँवला, 100 ग्राम नमक, 10 ग्राम काला नमक, 5 ग्राम हल्दी, 1 ग्राम सौंफ, 10 ग्राम काली मिर्च, 1 ग्राम हींग, 20 ग्राम राई, 5 ग्राम जीरा, 5 ग्राम अजवाइन, 5 ग्राम लाल मिर्च, 2 ग्राम गरम मसाला, 200 मिली तेल।

विधि: आँवले को साफ पानी से धोकर इतना उबाल लें, जिससे इसका आसानी से बीज निकल जाए। बीज निकालकर आँवले के

फांकों में हल्दी मिलाकर धूप में रख दें। दूसरे दिन सभी मसालों को कूटकर आँवले में मिला दें। ऊपर से गरम तेल को ठंडा करके डाल दें और अच्छी तरह मिलाएँ। ऊपर से कपड़ा बाँधकर धूप में करीब 10-15 दिन रखें। अचार तैयार है।

5. आँवला जैम

सामग्री: 1 किलो आँवला, 1.5 किलो चीनी, 2 ग्राम सिट्रिक एसिड, चुटकी भर खाने वाला लाल रंग, 1 ग्राम सोडियम बेंजोएट प्रति किलो जैम।

विधि: आँवले को साफ पानी में धोकर पानी में इतना उबाल लें, जिससे उसकी गुठली बाहर आ जाए। इसके बाद गुठली निकालकर उबले हुए आँवले को कढ़ाई के मूसल से कूटकर पेस्ट बना लें। आँवला पेस्ट और चीनी को एक साथ मिलाकर आँच पर जैम बनने तक पकाएँ। अंतिम बिंदु की पहचान के लिए जैम को चम्मच से ऊपर से गिराएँ, अगर जैम बूंद की बजाय थक्के के रूप में गिरता है तो जैम तैयार हो गया। एक कटोरी पानी लेकर उसमें जैम को डालिए, यदि वो घुलने की बजाय थक्के के रूप में रहता है, तो जैम सही से तैयार हो चुका है। अंत में आँच से उतारकर इसमें खाने वाला रंग व सोडियम बेंजोएट मिलाएँ और गरम अवस्था में ही जार या बोतल में भरकर रख लें।

6. आँवला कैंडी

सामग्री: 15 किलो आँवला, 15 किलो चीनी।

विधि: आँवले को साफ पानी से धोकर पानी में इतना उबाल लें, जिससे उसकी गुठली अलग हो जाए। इसके बाद 5 किलो चीनी में आधा लीटर पानी डालकर एक तार की चाशनी बना लें। चाशनी को ठंडा होने पर आँवले की फांके रात भर चाशनी में छोड़ दें। दूसरे दिन चाशनी से निकालकर 5 किलो चीनी और चाशनी में डालें और चाशनी को गाढ़ा कर एक तार की चाशनी बना लें। चाशनी को ठंडा होने पर फांकों को चाशनी में छोड़ दें। तीसरे दिन फिर यही प्रक्रिया बाकी हुई 5 किलो चीनी के साथ दोहराएँ और इस तरह फांकों के साथ 8-10 दिन तक चाशनी में छोड़े दें। अंत में फांकों को साफ सूती कपड़े से पोंछकर धूप या ड्रायर में इतना सुखा लें कि उनमें 10 प्रतिशत से ज्यादा नमी न हो।

7. आँवला-पुदीना शरबत

सामग्री: 1 लीटर आँवला जूस, 2 किलो चीनी, 200 ग्राम पुदीना, 1 ग्राम पोटेशियम मेटाबाइसल्फाइट प्रति लीटर जूस।

विधि: सबसे पहले 1 लीटर आँवला जूस निकाल लें। पुदीने की पत्तियों को अच्छी तरह साफ और मिक्सर में पीसकर तथा छानकर उसका रस निकाल लें। 2 किलो चीनी में 500 मिली. पानी डालकर पकने के लिए रख दें और एक तार की चाशनी तैयार कर लें। चाशनी तैयार होने से 2 मिनट पहले उसमें पुदीने का रस भी डाल लें ताकि वह भी एक बार पक जाए। उसके बाद चाशनी को थोड़ा ठंडा होने पर उसमें आँवले का रस मिलाकर छानें और अंत में पोटेशियम मेटाबाइसल्फाइट मिलाकर साफ, स्वच्छ बोतलों में भरकर रख दें। सर्व करते समय शरबत में ठंडा पानी व बर्फ डालें।

मशरूम की खेती: सीमित संसाधनों में अतिरिक्त आय और महिला किसानों के सशक्तिकरण का साधन

दीबा कामिल, अमृता दास, विपिन वर्मा, शिम्पाले जया सोपान, सचिन राठी, तिलकेश्वर प्रसाद एवं एम. एस. सहारन

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

मशरूम एक पोषक तत्वों से भरपूर खाद्य पदार्थ है, जिसे सब्ज़ियों का "सुपर फूड" भी कहा जाता है। यह पौधों से नहीं बल्कि कवक से प्राप्त होता है। मशरूम खेती को कम भूमि, कम श्रम और सीमित पूंजी में शुरू किया जा सकता है, इसलिए यह विशेष रूप से लघु एवं सीमांत किसानों के लिए एक अत्यंत लाभकारी आय का स्रोत बन गया है। मशरूम में उच्च प्रोटीन, विटामिन-बी समूह, खनिज लवण, फाइबर एवं एंटीऑक्सिडेंट भरपूर मात्रा में होते हैं, जो इसे पौष्टिक व कम कैलोरी वाला भोजन बनाते हैं। विभिन्न साहित्य स्रोतों में मशरूम और अन्य कवकों द्वारा उत्पादित 130 से अधिक औषधीय कार्यों का उल्लेख मिलता है, जिनमें प्रमुख रूप से एंटीऑक्सीडेंट, कैंसर-रोधी, मधुमेह-रोधी, एंटी-एलर्जिक, रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने वाले, हृदय संरक्षक, कोलेस्ट्रॉल कम करने वाले, विषाणुरोधी, जीवाणुरोधी, एं परजीवीरोधी, कवकरोधी और हेपेटोप्रोटेक्टिव (यकृत-संरक्षक) प्रभाव शामिल हैं। भारत में मशरूम की खेती अपेक्षाकृत नई है, लेकिन यह तेजी से लोकप्रिय होती जा रही है। पश्चिम बंगाल, उत्तर प्रदेश, हरियाणा, तमिलनाडु, कर्नाटक एवं महाराष्ट्र में मशरूम की खेती बड़े पैमाने पर हो रही है। देश में कुल मशरूम उत्पादन प्रति वर्ष लाखों टन में हो रहा है और इसकी मांग लगातार बढ़ रही है।

उत्पादन

वर्तमान में विश्व में लगभग 40 लाख टन मशरूम का उत्पादन होता है। भारत में प्रतिवर्ष 1.5 लाख टन से अधिक मशरूम का उत्पादन किया जा रहा है और इसमें निरंतर वृद्धि हो रही है। विश्व में लगभग 2000 खाद्य मशरूम प्रजातियाँ पाई जाती हैं, जिनमें से भारत में लगभग 300 प्रजातियाँ रिपोर्ट की गई हैं। इनमें से लगभग 40 प्रजातियों की खेती तकनीक विकसित की जा चुकी है तथा व्यावसायिक स्तर पर लगभग 10 प्रकार की मशरूम का उत्पादन होता है। भारत में बटन मशरूम सबसे अधिक लोकप्रिय है, इसके बाद शिटाके, आयस्टर, पराल मशरूम और दूधिया मशरूम प्रमुख हैं। प्रत्येक मशरूम की वृद्धि के लिए विशिष्ट तापमान आवश्यक होता है। बटन और शिटाके मशरूम ठंडी जलवायु में उगते हैं और इन्हें 20°सें से कम तापमान चाहिए, जबकि पराल, दूधिया और आयस्टर मशरूम 20–35°सें तापमान में अच्छी तरह उगते हैं। भारत के अधिकांश मैदानी क्षेत्र गर्म जलवायु वाले हैं, जहाँ शीतकाल की अवधि सीमित होती है। ऐसे क्षेत्रों में बटन मशरूम केवल सर्दियों (लगभग 4–5 माह) में ही उगाया जाता है, जबकि पराल, दूधिया तथा आयस्टर मशरूम वर्ष के अधिकांश समय सफलतापूर्वक उगाए जा सकते हैं।

कुछ उपयोगी मशरूम और उनके पोषण मूल्य (प्रति 100 ग्राम)

मशरूम	वैज्ञानिक नाम	नमी (%)	प्रोटीन (ग्राम)	वसा (ग्राम)	कार्बोहाइड्रेट (ग्राम)	रेशा / तंतु (ग्राम)	राख (ग्राम)	कैलोरी (किलो कैलोरी)
बटन मशरूम	एगारिकस बिस्पोरस	91.0	3.1	0.3	3.3	1.0	0.8	22
ऑयस्टर मशरूम	प्ल्यूरोटस प्रजाति	89.0	3.3	0.4	6.1	2.3	1.0	33
शीटाके मशरूम	लेंटिनुला एडोड्स	89.5	2.2	0.5	7.0	2.5	1.3	34
वुड ईयर मशरूम	ऑरिकुलारिया प्रजाति	85.0	1.5	0.1	7.0	5.0	1.5	25
पैडी स्ट्रॉ मशरूम	वोल्वारीएला प्रजाति	90.4	3.9	0.4	4.3	1.2	1.0	32

मशरूम उत्पादन के मुख्य लाभ

कम लागत और अधिक मुनाफा: मशरूम की खेती के लिए महंगी मशीनरी या बड़े खेत की जरूरत नहीं होती, इसे साधारण कमरे में भी उगाया जा सकता है।

तेज आय: मशरूम का फसल चक्र बहुत छोटा है। यह 3 से 4 हफ्तों में तैयार हो जाता है, जिससे जल्दी आमदनी शुरू हो जाती है।

उच्च पौष्टिकता: मशरूम प्रोटीन, फाइबर, विटामिन-बी, विटामिन-डी और एंटीऑक्सीडेंट का उत्कृष्ट स्रोत है, जो स्वास्थ्य के लिए फायदेमंद है।

सरकारी सहायता: भारत के कई राज्यों में मशरूम की खेती पर अनुदान (सब्सिडी) भी प्रदान की जाती है।

महिला सशक्तिकरण: यह घर की महिलाओं के लिए स्वरोजगार का एक अच्छा साधन है, जिससे वे आर्थिक रूप से स्वतंत्र हो रही हैं।

वर्ष भर खेती: आधुनिक तकनीक से इसे साल के लगभग हर मौसम में, विशेषकर नियंत्रित वातावरण में उगाया जा सकता है।

बढ़ती मांग: होटल और घरेलू रसोई में इसकी मांग लगातार बढ़ रही है, जिससे बाज़ार में अच्छी कीमत मिलती है।

महिला किसानों के लिए मशरूम खेती का महत्व

महिला किसानों के लिए मशरूम की खेती आर्थिक आत्मनिर्भरता, कम लागत और पौष्टिक सुरक्षा का एक सशक्त माध्यम है। यह घर के छोटे से स्थान में, घर के कार्यों के साथ-साथ की जा सकती है, जिसमें कम श्रम की आवश्यकता होती है। इससे महिलाएँ न केवल आय बढ़ा रही हैं, बल्कि आत्मनिर्भर बनकर सामाजिक सम्मान भी पा रही हैं। इस व्यवसाय ने ग्रामीण महिलाओं को आर्थिक रूप से सशक्त बनाया है, जिससे वे अपने परिवार की आय में योगदान दे रही हैं। इसका एक सशक्त उदाहरण श्रीमती मधु पटेल, जिन्हें "मशरूम लेडी ऑफ बिहार" के नाम से जाना जाता है। उन्होंने कृषि विज्ञान केंद्र से प्राप्त प्रशिक्षण के माध्यम से मशरूम उत्पादन एक सफल उद्यम के रूप में विकसित किया। आज वे न केवल स्वयं आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर हैं, बल्कि अनेक ग्रामीण महिलाओं को भी मशरूम खेती से जोड़कर रोजगार एवं आय के अवसर प्रदान कर रही हैं ।

मशरूम खेती की आवश्यकताएँ

मशरूम खेती के लिए बहुत बड़ी जमीन की आवश्यकता नहीं होती हैं । एक साधारण कमरे, गोदाम या शेड में भी उत्पादन किया जा सकता है। मशरूम की खेती के लिए आवश्यक चीजें इस प्रकार से हो- मशरूम घर, पॉलीथीन के थैले, कम्पोस्ट बनाने के लिए चबूतरा, कम्पोस्ट बनाने की सामग्री, मशरूम स्पान, केसिंग मिट्टी आदि।

कम्पोस्ट तैयार करना

स्पान मिलाना

फलनकाय बनना

तुड़ाई

बटन मशरूम की खेती

मशरूम की व्यावसायिक खेती घाटी में कहीं भी की जा सकती है, क्योंकि इसके लिए आवश्यक पर्यावरणीय परिस्थितियों को बनाए रखना आसान होता है और आवश्यक कच्चा माल, जैसे सब्सट्रेट और सप्लीमेंट, स्थानीय रूप से आसानी से उपलब्ध होता है। मशरूम की खेती में दो प्रकार की गतिविधियां शामिल होती हैं – बाहरी और इनडोर गतिविधियां ।

बाहरी गतिविधियां: इसमें सब्सट्रेट का प्री-वेटिंग (पूर्व गीला करना) और कम्पोस्टिंग शामिल है, जिसे किसी भी मौसम में किया जा सकता है।

इनडोर गतिविधियां: इनडोर गतिविधि के दौरान स्पॉन रन (वनस्पतिक वृद्धि) के लिए तापमान 22 से 25°सें और फसल उत्पादन (फलन) के लिए 14 से 18°सें होना चाहिए। यदि तापमान बहुत कम होगा, तो स्पॉन रन धीमा या रुक जाएगा और यदि तापमान अधिक होगा, तो खरपतवार फंगस (प्रतिस्पर्धी फंगस) का विकास होगा। मशरूम की वृद्धि के लिए लगभग संतृप्त वातावरण (85–90% सापेक्ष आर्द्रता) की आवश्यकता होती है। हालांकि, स्पॉन रन के दौरान कम्पोस्ट पर सीधे पानी का छिड़काव फसल के लिए हानिकारक होता है।

कम्पोस्ट तैयार करना

कम्पोस्ट मशरूम खेती का आधार होता है। यह एक पोषक सब्सट्रेट है जिस पर मशरूम की माइसिलियम वृद्धि करती है। मशरूम की खेती कृत्रिम रूप से तैयार किए गए कम्पोस्ट पर की जाती है। मशरूम कम्पोस्ट का बनना एक जटिल जैव-रसायन प्रक्रिया है। इसमें सेल्यूलोज, हेमी-सेल्यूलोज तथा लिग्निन आंशिक रूप से सड़ जाते हैं और अकार्बनिक नाइट्रोजन से सूक्ष्मजीवी प्रोटीन का संश्लेषण होता है। नाइट्रोजन-स्रोतों को कम्पोस्ट में मिलाने के कारण कार्बन/नाइट्रोजन अनुपात भी कम हो जाता है। कम्पोस्ट बनाने के लिए प्रयोग में लाया जाने वाला भूसा एक साल से अधिक पुराना अथवा बारिश में भीगा नहीं होना चाहिए। 250 किलो गेहूँ के भूसे के स्थान पर 400 किलो धान पुराल का भी प्रयोग कर सकते हो। यदि धान का भूसा प्रयोग कर रहे हों तो साथ में 6 किलो बिनौले (कपास का बीज) के आटे का प्रयोग भी करें।

कम्पोस्ट भरना: पूर्णरूपेण तैयार कम्पोस्ट को ट्रे, रैकों या थैलियों में भर लेते हैं। ट्रे अथवा रैंकों में कम्पोस्ट की 6 इंच मोटी पर्त तथा थैलियों में कम्पोस्ट की 10-12 इंच मोटी पर्त भर दें । भरने के बाद कम्पोस्ट को हल्का सा दबाकर समतल कर देते हैं।

स्पान मिलाना: आमतौर पर (भार/भार) के अनुपात में कम्पोस्ट के भार का 1%, अथवा सूखे भूसे के भार का लगभग 2–3% स्पॉन के रूप में कम्पोस्ट में मिलाया जाता है। स्पान मिलाने के पश्चात् इन ट्रे अथवा रैकों को पुराने अखबार के पन्नों से ढ़क देते है और स्प्रेयर (फुहारे) की सहायता से इनके ऊपर धीरे धीरे पानी छिड़कते है।

मशरूम घर का तापमान 22–26°से. के बीच तथा आर्द्रता का स्तर 80–85% बनाए रखा जाता है।

स्पान का फैलना: अनुकूल परिस्थितयों में, स्पान मिलाने के 14-15 दिनों के भीतर कम्पोस्ट की सतह सफेद, रूई के समान, कवक जाल की वृद्धि से ढ़क जाती है।

केसिंग: जब कम्पोस्ट में स्पान पूरी तरह से फैल जाता है तो रैंक, थैलों अथवा ट्रे पर केसिंग की जाती है। स्पान फैलने के बाद कम्पोस्ट को जिस चीज से ढका जाता है उसे 'केसिंग मिट्टी, कहते है । केसिंग मिट्टी निर्जमीकृत होनी चाहिए ताकि इसमें हानिकारक पीडक और सूक्ष्मजीव न रहें। केसिंग के बाद अगले 3 दिन तक मशरूम घर का तापमान 24-25° सें बनाए रखते है। तीन दिन बाद तापमान 18° सें तक कम कर देते है और फलनकाय बनने के दौरान तापमान 14-18° से रखा जाता है। तीन दिन के भीतर मशरूम का कवकजाल, केसिंग मिट्टी पर फैल जाता है।

फलनकाय बनना: फलनकाय बनते समय ताजा हवा आवश्यक होती है। इस दौरान तापमान 14-18° से और आपेक्षिक आर्द्रता 80-85 % बनाए रखनी चाहिए। अनुकूल परिस्थितियों में, सामान्यतः केसिंग के 15-20 दिन बाद मशरूम के पिन दिखाई देने लगते है। 4-5 दिन के भीतर ये पिन सफेद बटन का रूप ले लेते है। तुड़ाई योग्य मशरूम तैयार होने में कुल मिलाकर 8-10 दिन लग जाते हैं।

फसल कटाई: जब मशरूम के पीलियस (टोपी) का व्यास 3–4.5 सेमी. तक हो जाए और वह स्टाइप (तने) की लंबाई से लगभग दुगुना हो, तब इसकी तुड़ाई कर लेनी चाहिए। लम्बी विधि द्वारा कम्पोस्ट तैयार करने पर प्रति वर्गमीटर क्षेत्र से औसतन 8-10 किलो. ताजे मशरूम की उपज प्राप्त होती है। यह उपज प्रति 100 किलो. कम्पोस्ट से 6-8 हफ्तों में प्राप्त होती है।

मशरूम उत्पादन का लागत–लाभ अनुपात

क्र. सं.	मद	बटन मशरूम फसल (समय 5 माह)	किराया/लागत (₹)	ढींगरी मशरूम (समय 2 माह)	किराया/लागत (₹)
1	कुल जगह	250 गज²	—	250 गज²	—
2	मशरूम घर	25 × 25 × 10	10,000	25 × 20 × 10	4,000
3	बिजली / पानी	—	10,000	—	2,000
4	पुआल / भूसा	6000 किग्रा @ ₹5	30,000	2400 किग्रा @ ₹5	12,000
	अन्य सामग्री	—	10,000	—	4,000
5	स्पॉन	60 किग्रा	6,000	24 किग्रा	2,400
6	मजदूरी	—	15,000	—	10,000
	कुल लागत (अ)	—	81,000	—	34,400
	कुल उत्पादन	900 किग्रा @ ₹150/ किग्रा	1,35,000	360 किग्रा @ ₹250/ किग्रा	90,000
	कुल लाभ	—	54,000	—	55,600

अमरूद की सफल बागवानी : श्रीमती लक्ष्मी मनोज खंडेलवाल की कहानी

मधुवाला ठाकरे एवं ओ.पी.अवस्थी
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

फलों की बागवानी अन्य अनाज, दलहनों, सब्जियों इत्यादि की तुलना में अधिक जटिलता भरी है। बागवानी में वर्ष-पर्यन्त फल वृक्षों की देखभाल करनी होती है तथा इनके प्रबंधन के लिए तकनीकी ज्ञान का होना आवश्यक है और सामान्यतः पुरुष ही बागवानी का कार्य करते है। किन्तु जैसे प्रत्येक क्षेत्र में महिलायें, पुरुषों की बराबरी पर आकर कार्य कर रही है ठीक उसी तरह बागवानी के क्षेत्र में भी महिलायें आगे बढ़ रही है इसी का एक उदाहरण श्रीमती लक्ष्मी-मनोज खंडेलवाल है जिन्होंने कोटा के पीपलदा गांव में अमरूद की बागवानी करके अपनी अलग पहचान बनाई है।

लक्ष्मी जी एम. ए. राजनीति विज्ञान से शिक्षित हैं वर्ष 2009-10 तक परिवार के पास गजभर ज़मीन भी नहीं थी पति श्री मनोज खंडेलवाल व्यवसाय करते थे उससे जो आमदनी हुई उससे ज़मीन खरीदी और परंपरागत फसलों की खेती शुरू की। आज उनके पास 70 बीघा ज़मीन है जिसमें 40 बीघा में अमरूद की बागवानी है बाकी भूमि में सब्जी, गेंहू, सरसों, इत्यादि की खेती करती हैं। जब लक्ष्मी जी ने बागवानी की शुरुवात की तो उन्हें ज्यादा इसके बारे में ज्ञान नहीं था। उन्होंने बागवानी की समझ बढ़ाने के लिए अपने पति श्री मनोज जी के साथ सवाई माधोपुर, जयपुर, लखनऊ, दिल्ली, गाजियाबाद, इलाहाबाद, सोलापुर, विजयवाड़ा, कोलकाता, रायपुर, नागपुर, जलगांव, नाशिक, अहमदाबाद, रतलाम, नीमच जैसे शहरों का भ्रमण कर वँहा पर अमरूद की बागवानी के विषय में जानकारी प्राप्त की। उन्होंने वँहा पर अलग-अलग किस्मों की बागवानी एवं उनका प्रदर्शन भी देखा। इन्होंने अमरूद की विभिन्न किस्में लगाई हुई हैं जैसे हिसार सफेदा, लखनऊ-49, बरफ़खान, वीएनआर -बिही, ताइवान पिंक, थाई -7, थाई-1 केजी इत्यादि किस्मों के दस हज़ार से भी अधिक पौधें लगाएं हैं। अमरूद में बगीचे की स्थापना के पश्चात प्रत्येक वर्ष आने वाली लागत हर किस्म के लिए अलग-अलग होती है जैसे वीएनआर में लगभग 5 लाख रुपये प्रति हेक्टेयर, ताइवान पिंक में 3 लाख रुपये प्रति हेक्टेयर आदि। औसतन अमरूद के बगीचे में शुद्ध लाभ का परिमाण 5 लाख प्रति हेक्टेयर होता है।

श्रीमती लक्ष्मी जी की मेहनत एवं लगन को देखकर राजस्थान सरकार ने उन्हें आत्मा के अंतर्गत 10,000 रुपए का पुरस्कार भी दिया है। अब लक्ष्मी जी एवं उनके पति दोनों मिलकर अमरूद की बागवानी को आगे बढ़ा रहे हैं खेती के साथ-साथ सामाजिक कार्यों में भी लक्ष्मी जी एवं उनके पति बढ़ चढ़ कर हिस्सा लेते हैं जो कि उनके एक सफल किसान होने के साथ- साथ एक उत्तरदायी नागरिक होने की पहचान है। लक्ष्मी जी ने अमरूदों की जैविक (ओर्गेनिक) खेती की तरफ भी अपने कदम बढ़ाएँ हैं। अमरूद के साथ-साथ स्ट्रॉबेरी की जैविक खेती की भी लक्ष्मी जी ने शुरुआत की है। खेती के साथ-साथ वह पशुपालन का कार्य भी करती हैं। जिससे कि खाद एवं दूध की उपलब्धता बनी रहे। औषधीय फसलों में वे सफेद मूसली की खेती कर रही हैं। आज के इस प्रतिस्पर्धा के समय में लक्ष्मी जी ने यह उदाहरण प्रस्तुत किया है कि कैसे एक सामान्य महिला बागवानी को व्यावसायिक रूप में अपनाकर अच्छी आय प्राप्त की जा सकती है, और ना सिर्फ अपने परिवारकि अपितु संपूर्ण समाज में आर्थिक एवं पौष्टिक स्थिरता को साथ-साथ स्थापित करने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है।

मॉडर्न-एग्रो
सफल किसान...
लक्ष्मी-मनोज खंडेलवाल ने
अमरूद की खेती से बनाई पहचान
युवाओं को दिखाई आजीविका की नई राह
कम लागत पर मिल रहा मुनाफा
बागवानी के बागबान खंडेलवाल दंपति
'आत्मा' पुरस्कार से सम्मानित
बिजनेस की बजाय खेती पर ध्यान केंद्रित

सौर ऊर्जा आधारित वर्षा रोबोट द्वारा सटीक खरपतवार नियंत्रण और बुवाई

दिलीप कुमार कुशवाहा, पी. के. साहू, रमनजीत कौर, अमित गुप्ता, अरुणा टी. एन., एवं सौम्या कृष्णन वी.

भा. कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

भारत की कृषि प्रणाली विविधताप से परिपूर्ण है, जहाँ की जलवायु, मिट्टी संरचना और फसल चक्र में व्यापक भिन्नता पाई जाती है। जिसके कारण कृषि हमेशा चुनौती पूर्ण रही है। बढ़ती जनसंख्या के दबाव के चलते अब कृषि को टिकाऊ, पर्यावरणीय दृष्टि से अनुकूल और तकनीकी रूप से उन्नत बनाना समय की आवश्यकता बन गया है। इसके लिए न केवल कृषि उत्पादकता में वृद्धि आवश्यक है, बल्कि उत्पादन लागत को घटाना, संसाधनों का कुशल उपयोग करना और पर्यावरणीय क्षति को नियंत्रित करना भी अत्यंत जरूरी हो गया है। कृषि में खरपतवार नियंत्रण एक पुरानी चुनौती रही है, क्योंकि खरपतवार फसलों से पोषक तत्व, पानी, प्रकाश और स्थान के लिए प्रतिस्पर्धा करते हैं, जिससे उपज और गुणवत्ता घटती है। पारंपरिक विधियाँ जैसे हाथ से निराई, छिड़काव या यांत्रिक उपकरण समय-साध्य, महंगी और पर्यावरण के लिए हानिकारक हो सकती हैं, जिससे इनकी प्रभावशीलता सीमित हो जाती है।

उपरोक्त विंदुओ को ध्यान में रखते हुये कृषि अभियांत्रिकी संभाग द्वारा विकसित किया गया वेरिएबल स्वाथ हर्बीसाइड एप्लीकेटर (वर्षा) रोबोट भारतीय कृषि प्रणाली में यह रोबोट अत्यंत उपयोगी हो सकता है। यह रोबोट विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार द्वारा वित्त पोषित परियोजना के अंतर्गत विकसित किया गया है और यह भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (ICAR) द्वारा प्रमाणित भारत का प्रथम कृषि रोबोट है, जिसे विशेष रूप से सटीक और लक्षित खरपतवार नियंत्रण के लिए विकसित किया गया है।

यह रोबोट उन्नत कैमरा प्रणाली, नोज़ल आधारित छिड़काव यंत्र, समायोज्य चौड़ाई, सौर ऊर्जा और बैटरी आधारित संचालन जैसी तकनीकों से सुसज्जित है। यह तकनीक रसायनों के उचित और सटीक उपयोग को सुनिश्चित करती है, जिससे पर्यावरणीय क्षति में कमी आती है और किसानों की उत्पादन लागत घटती है।

वर्षा रोबोट न केवल एक उन्नत स्प्रेयर है, बल्कि इसे प्लांटर के रूप में भी उपयोग किया जा सकता है। इसकी मॉड्यूलर संरचना के कारण इसमें बीज मापक इकाई, फरो ओपनर और गहराई नियंत्रण जैसे घटक जोड़े जा सकते हैं, जिससे यह सटीक बीज बुवाई में सक्षम बनता है। प्लांटर के रूप में यह बीजों का समान वितरण, उचित गहराई पर बुवाई और बेहतर बीज-मिट्टी संपर्क सुनिश्चित करता है, जिससे अंकुरण दर बढ़ती है। यह बहुउद्देशीय रोबोट किसानों को खरपतवार नियंत्रण और बुवाई—दोनों कार्यों में सहायता करता है, जिससे समय, श्रम और लागत की बचत होती है। साथ ही साथ रोबोट की उपयोगिता वर्ष भर सुनिश्चित हो पाती है।

संरचना और आयाम

वर्षा रोबोट का निर्माण बहु-विषयक इंजीनियरिंग ज्ञान और फील्ड परीक्षणों के आधार पर किया गया है। इसमें यांत्रिक, इलेक्ट्रॉनिक, रोबोटिक और कंप्यूटर विज्ञान की तकनीकों का समन्वय किया गया है। इस खंड में रोबोट की संरचना, तकनीकी विशिष्टताएँ, कार्यप्रणाली और नियंत्रण प्रणाली का विस्तृत विवरण प्रस्तुत किया गया है।

वर्षा रोबोट को विशेष रूप से खेत की विविध परिस्थितियों के अनुसार डिज़ाइन किया गया है। इसकी भौतिक विशेषताओं में

3.0 मीटर लंबाई, 2.5 मीटर ऊँचाई और लगभग 450 किलोग्राम वजन शामिल है। यह रोबोट लगभग 1.0 मीटर का ग्राउंड क्लीयरेंस प्रदान करता है, जिससे यह विभिन्न ऊँचाइयों वाली सब्ज़ियों की फसलों के ऊपर से बिना क्षति पहुँचाए आसानी से गुजर सकता है।

इसकी सबसे विशिष्ट विशेषता इसका चौड़ाई समायोजन तंत्र है, जिसके माध्यम से यह 1.4 मीटर से 2.8 मीटर तक अपनी चौड़ाई को फसल की पंक्तियों की दूरी के अनुसार बदल सकता है, जिससे यह विभिन्न प्रकार की रोपाई के बीच सहजता से संचालित किया जा सकता है।

कैमरा और छिड़काव प्रणाली

इस रोबोट में एक उच्च-रिज़ोल्यूशन रंग आधारित कैमरा स्थापित किया गया है, जो फसल और खरपतवार के रंग में अंतर कर रीयल टाइम इमेज प्रोसेसिंग तकनीक के माध्यम से खरपतवार की सटीक पहचान करता है। पहचान के उपरांत, रोबोट के दोनों ओर लगी रोबोटिक भुजाओं पर लगे विशेष नोज़ल तंत्र केवल उसी स्थान पर रसायन का छिड़काव करते

हैं जहाँ खरपतवार मौजूद होता है। इस तकनीक से रसायन की अनावश्यक बर्बादी से बचाव होता है, जिससे पर्यावरणीय प्रभाव न्यूनतम होता है और लागत में भी उल्लेखनीय कमी आती है।

नियंत्रण प्रणाली

वर्षा रोबोट को आधुनिक रिमोट कंट्रोल प्रणाली के माध्यम से संचालित किया जाता है, जो कि लगभग 1.0 किलोमीटर की परिधि में प्रभावी रूप से कार्य करता है। इस रिमोट कंट्रोल यूनिट में एक इनबिल्ट डिस्प्ले स्क्रीन दी गई है, जो रोबोट के अग्रभाग में लगे उच्च-गुणवत्ता वाले कैमरे से प्राप्त रीयल टाइम वीडियो को प्रसारित करती है। यह कैमरा खेत की स्थिति, फसलों की पंक्तियाँ, और खरपतवार की उपस्थिति को स्पष्ट रूप से दिखाता है,

इस प्रणाली के माध्यम से किसान न केवल रोबोट की दिशा और गति को नियंत्रित कर सकता है, बल्कि आवश्यकता पड़ने पर छिड़काव की प्रक्रिया को चालू या बंद भी कर सकता है। यह तकनीक विशेष रूप से उन किसानों के लिए उपयोगी है जो बड़े खेतों में कार्य कर रहे होते हैं, या वृद्ध या अस्वस्थ किसान जो खेत में लंबे समय तक काम नहीं कर सकते। इसके अतिरिक्त, खराब मौसम या अत्यधिक गर्मी जैसे प्रतिकूल परिस्थितियों में भी यह रिमोट प्रणाली किसानों को सुरक्षित और कुशल संचालन की सुविधा प्रदान करती है। कुल मिलाकर, यह रिमोट मॉनिटरिंग और कंट्रोल सुविधा वर्षा रोबोट को एक स्मार्ट, सुविधाजनक और दक्ष कृषि यंत्र बनाती है जो परिश्रम को कम करने के साथ-साथ सटीकता और उत्पादकता को बढ़ाती है।

ऊर्जा स्रोत

वर्षा रोबोट दोहरे ऊर्जा स्रोतों का उपयोग करता है, जिससे यह ऊर्जा दक्षता और पर्यावरणीय अनुकूलता के दृष्टिकोण से अत्यधिक प्रभावी है। पहला ऊर्जा स्रोत सौर ऊर्जा प्रणाली है, जिसमें रोबोट के ऊपर लगे सोलर पैनल (200 वाट के 4 पैनल) धूप से ऊर्जा उत्पन्न करते हैं। ये सोलर पैनल दिन के समय सूर्य की किरणों को आकर्षित करते हैं और उसे विद्युत ऊर्जा में बदलकर बैटरी में संग्रहित करते हैं। यह सौर ऊर्जा प्रणाली रोबोट को प्राकृतिक ऊर्जा से चलाने में मदद करती है, जिससे इसके संचालन का खर्च कम होता है और यह पर्यावरण के लिए भी अनुकूल होता है, क्योंकि यह नवीकरणीय स्रोत से ऊर्जा प्राप्त करता है।

दूसरा ऊर्जा स्रोत बैटरी भंडारण है, जिसमें उच्च क्षमता वाली लिथियम-आयन बैटरियाँ लगी होती हैं। ये बैटरियाँ सौर पैनल से चार्ज होने के बाद, रोबोट को लंबे समय तक निर्बाध ऊर्जा प्रदान करती हैं। लिथियम-आयन बैटरियाँ ऊर्जा संचय में बहुत प्रभावी

होती हैं, क्योंकि ये अधिक ऊर्जा स्टोर करने और लंबी अवधि तक कार्य करने में सक्षम होती हैं। इसके कारण रोबोट को लंबे समय तक खेतों में कार्य करने के लिए लगातार बिजली मिलती रहती है, चाहे सूर्य की रोशनी कम हो या रात का समय हो।

इन दोनों ऊर्जा स्रोतों का संयोजन यह सुनिश्चित करता है कि रोबोट लगातार कार्य करता रहे और ऊर्जा की कोई कमी न हो। यदि दिन के समय सोलर पैनल पर्याप्त ऊर्जा उत्पन्न नहीं कर पाते, तो बैटरी से ऊर्जा का इस्तेमाल होता है, और जब बैटरी में ऊर्जा की कमी होती है, तो फिर से सोलर पैनल से चार्जिंग होती है। इस प्रकार, यह ऊर्जा स्रोतों का संयोजन न केवल रोबोट को पर्यावरणीय दृष्टि से स्थिर बनाता है, बल्कि बिना किसी ऊर्जा संकट के इसे लंबे समय तक काम करने की सुविधा भी प्रदान करता है।

गियर बॉक्स और बलाघूर्ण समायोजन

रोबोट में एक विशेष प्रकार का गियर बॉक्स लगाया गया है, जो बलाघूर्ण (टॉर्क) को आवश्यकता के अनुसार समायोजित करता है। यह प्रणाली रोबोट को विभिन्न मिट्टी की स्थितियों में स्थिर गति और शक्ति प्रदान करती है।

रोबोटिक प्लांटर इकाई

रोबोटिक प्लांटर की बीज मापक इकाई में एक गहराई नियंत्रण तंत्र विकसित किया गया, जो सटीक बीज प्रतिस्थापन और समान अंकुरण के लिए आवश्यक होता है। यह प्रणाली वर्षा रोबोट से संलग्न की गई है। इसमें बीज होपर, मापक इकाई, टाइन-प्रकार की फरो ओपनर, बीज आवरण यंत्र, लीनियर ऐक्चुयटर, लिमिट स्विच, अल्ट्रासोनिक सेंसर, डी. सी. मोटर और रोटरी एन्कोडर लगाये गये हैं। लीनियर ऐक्चुयटर द्वारा फरो ओपनर को नियंत्रित कर अधिकतम 10 सेमी गहराई तक बीज गिराया जा सकता है, जबकि अल्ट्रासोनिक सेंसर मिट्टी की सतह से गहराई की निगरानी की जाती है। मोटर द्वारा बीज मापक तस्तरी को चलाकर बीज वितरण को रोबोट की गति के साथ समन्वित किया जाता है। इस रोबोटिक प्लांटर इकाई द्वारा पूसा प्रगति मटर की किस्म पर 500 वर्ग मीटर क्षेत्र में परीक्षण करते हुए 85% अंकुरण दर प्राप्त की गई, जिससे यह साबित हुआ कि यह तंत्र सटीक बीज बुवाई, बेहतर बीज-मिट्टी संपर्क और उच्च अंकुरण में प्रभावी है।

सटीकता और दक्षता

वर्षा रोबोट की कैमरा आधारित प्रणाली ने 90% से अधिक सटीकता से खरपतवार की पहचान कर केवल लक्षित स्थानों पर रसायन का छिड़काव सुनिश्चित किया, जिससे रसायनों की खपत में 25% तक की कमी और पर्यावरणीय प्रभाव में गिरावट आई। इसकी सौर ऊर्जा और बैटरी से चालित प्रणाली इसे ईंधन-मुक्त

और अत्यंत कम संचालन लागत वाला बनाती है, जो एक बार चार्ज पर 6 घंटे तक कार्य कर सकता है। रिमोट कंट्रोल के उपयोग से मानव श्रम में 70% जिससे किसान की उत्पादकता और कार्यकुशलता बढ़ी। यह रोबोट 2–3 वर्षों में अपनी लागत वसूल कर लेता है और दीर्घकालिक रूप से एक लाभकारी निवेश साबित होता है।

निष्कर्ष

वेरिएबल स्वाथ हर्बीसाइड एप्लीकेटर (वर्षा) रोबोट भारतीय कृषि में तकनीकी सशक्तिकरण का उत्कृष्ट उदाहरण है। यह न केवल खरपतवार नियंत्रण को सटीक, कुशल और पर्यावरण हितैषी बनाता है, बल्कि किसानों को आधुनिक तकनीक से जोड़ने में भी सहायक है। भविष्य में यदि इसकी लागत को और कम किया जाए तथा क्षेत्रीय ज़रूरतों के अनुसार मॉडिफिकेशन किया जाए, तो यह छोटे और मध्यम किसानों के लिए भी अत्यंत उपयोगी बनाया जा सकता है।

किसान सारथी : डिजिटल एग्रीकल्चर का नया युग

कामिनी बिष्ट, कुशाग्रा जोशी, रेनू सनवाल एवं अमित ठाकुर
भाकृअनुप-विवेकानंद पर्वतीय कृषि अनुसन्धान संस्थान, अल्मोड़ा

भारत की कृषि व्यवस्था आज तकनीकी बदलावों से गुजर रही है। जहाँ एक तरफ पारंपरिक खेती से जुड़े अनुभव किसानों को मजबूत आधार प्रदान करते हैं, वहीं दूसरी ओर वैज्ञानिक तकनीकें, आधुनिक कृषि उपकरण और डिजिटल माध्यम कृषि को नई दिशा दे रहे हैं। ऐसे समय में किसानों के लिए सही जानकारी और वैज्ञानिक मार्गदर्शन समय पर मिलना अत्यंत आवश्यक है।

इसी कड़ी में सरकार द्वारा किसानों को डिजिटल रूप से सशक्त करने के लिए 'किसान सारथी' नामक अभिनव प्लेटफॉर्म लॉन्च किया गया है। किसान सारथी कृषि क्षेत्र का एक अत्याधुनिक डिजिटल मंच है, जिसे भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (ICAR) द्वारा किसानों को तकनीकी रूप से सशक्त बनाने के उद्देश्य से विकसित किया गया है। यह किसानों को उनके जिले के कृषि विज्ञान केंद्र (KVK) के वैज्ञानिकों से सीधे जोड़ता है और उन्हें फसल-विशेष, क्षेत्र-विशेष एवं वैज्ञानिक सलाह उपलब्ध कराता है। किसान मोबाइल के माध्यम से फसल रोग, कीट, खाद, सिंचाई, मौसम, उत्पादन तकनीक और बाजार से संबंधित जानकारी प्राप्त कर सकते हैं।

डिजिटल युग में कृषि की बदलती तस्वीर

आज के समय में खेती केवल जमीन, मौसम और बीज पर निर्भर नहीं रह गई है। डिजिटल क्रांति ने कृषि क्षेत्र में कई नए अवसर खोले हैं।

- किसान फेसबुक, यूट्यूब, ट्विटर जैसे प्लेटफॉर्म पर कृषि संबंधी वीडियो और सलाह देख रहे हैं।
- कृषि विश्वविद्यालय एवं कृषि संस्थान अपने स्वयं के यूट्यूब चैनलों के माध्यम से तकनीकी जानकारी प्रदान कर रहे हैं।
- विभिन्न मोबाइल एप और एक्सपर्ट सिस्टम पहले से ही किसानों में लोकप्रिय हैं।

ऐसी परिस्थिति में एक एकीकृत और विश्वसनीय डिजिटल मंच की आवश्यकता थी, जो किसानों को प्रमाणिक और त्वरित जानकारी उपलब्ध करा सके। इसी उद्देश्य से किसान सारथी का निर्माण किया गया।

किसान सारथी क्या है?

किसान सारथी भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (ICAR) द्वारा विकसित एक समग्र डिजिटल प्लेटफॉर्म है, जिसे 16 जुलाई 2021 को ICAR के 93वें स्थापना दिवस के अवसर पर केंद्रीय कृषि मंत्री एवं सूचना प्रौद्योगिकी मंत्री द्वारा लॉन्च किया गया।

किसान सारथी का विकास डिजिटल इंडिया कॉरपोरेशन (DIC) एवं भारतीय कृषि सांख्यिकी अनुसंधान संस्थान (IASRI) द्वारा संयुक्त रूप से किया गया है। यह प्लेटफॉर्म किसानों को कृषि, बागवानी, पशुपालन, मत्स्य पालन आदि क्षेत्रों में वैज्ञानिक सलाह, तकनीकी जानकारी, फसल-विशेष समाधान, रोग प्रबंधन तथा अन्य महत्वपूर्ण सुझाव उपलब्ध कराता है।

किसान सारथी की कार्य-प्रणाली

किसान सारथी को बेहद सरल और किसान-हितैषी बनाया गया है। इसकी कार्य-प्रक्रिया तीन प्रमुख स्तंभों पर आधारित है—

(क) किसान–कृषि विज्ञान केंद्र से सीधा संपर्क

किसान अपने जिले के कृषि विज्ञान केंद्र (KVK) से सीधे जुड़कर अपनी समस्या भेज सकते हैं। वैज्ञानिक उसी प्लेटफॉर्म पर समाधान दर्ज करते हैं, जिससे किसानों को समय पर सटीक सलाह प्राप्त होती है।

(ख) किसान कॉल सेंटर का समावेशन

प्रसिद्ध किसान कॉल सेंटर (टोल-फ्री नंबर 1800-180-1551) को भी किसान सारथी प्लेटफॉर्म से जोड़ा गया है। इससे किसानों को फोन के माध्यम से भी विषय-विशेषज्ञों की सलाह प्राप्त होती है।

(ग) वैज्ञानिकों का नियमित प्रशिक्षण

कृषि विज्ञान केंद्रों के वैज्ञानिकों को किसान सारथी प्लेटफॉर्म के कुशल उपयोग हेतु नियमित प्रशिक्षण दिया जाता है, जिससे जानकारी और भी प्रभावी एवं सही ढंग से किसानों तक पहुँच सके।

किसान सारथी की प्रमुख विशेषताएँ

वैज्ञानिकों की सीधी सलाह

किसान अपनी समस्या का फोटो, वीडियो या विवरण भेजकर सीधे वैज्ञानिक सलाह प्राप्त कर सकते हैं।

स्थानीय भाषा में जानकारी

किसानों को उनकी स्थानीय भाषा में सलाह दी जाती है, जिससे जानकारी को समझना आसान होता है।

फसल-विशेष एवं क्षेत्र-विशेष सलाह

अब किसानों को सामान्य सलाह न देकर उनकी फसल और क्षेत्र के अनुसार ही सटीक जानकारी प्रदान की जाती है।

रोग और कीट प्रबंधन

फसल में रोग या कीट लगने पर तुरंत समाधान उपलब्ध कराया जाता है, जिससे संभावित नुकसान को रोका जा सकता है।

बाजार एवं मूल्य जानकारी

किसान सारथी किसानों को बाजार की उपलब्धता, उचित मूल्य तथा संभावित बिक्री स्थलों की जानकारी भी प्रदान करता है।

वीडियो, फोटो और ऑडियो संदेश

किसान सरल भाषा में वीडियो या ऑडियो के रूप में भी आवश्यक जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। इससे जटिल कृषि समस्याओं को समझना और समाधान पाना अधिक आसान हो जाता है।

किसान सारथी से किसानों को होने वाले लाभ

समय और धन की बचत

वैज्ञानिकों तक पहुँचने के लिए किसानों को कहीं जाने की आवश्यकता नहीं पड़ती।

सटीक जानकारी, सही समय पर

इससे कृषि उत्पादन में वृद्धि और लागत में कमी होती है।

स्थानीय परिस्थितियों के अनुसार सलाह

मौसम, मिट्टी और फसल के अनुसार उपयुक्त वैज्ञानिक सलाह उपलब्ध कराई जाती है।

डिजिटल सशक्तिकरण की दिशा में महत्वपूर्ण कदम

ग्रामीण क्षेत्रों में डिजिटल माध्यमों का उपयोग बढ़ता है, जिससे किसान आधुनिक तकनीकों से जुड़ते हैं।

किसान सारथी क्या नहीं करता?

यह प्लेटफॉर्म सरकारी योजनाओं जैसे—प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना, किसान क्रेडिट कार्ड, बीमा राशि भुगतान आदि विषयों पर जानकारी प्रदान नहीं करता। इसका मुख्य फोकस तकनीकी और वैज्ञानिक सलाह देना है।

किसान सारथी की आवश्यकता क्यों?

कई बार किसानों को मौसम परिवर्तन, रोग प्रकोप या नई तकनीकों से जुड़ी जानकारी समय पर नहीं मिल पाती, जिससे उत्पादन प्रभावित होता है। किसान सारथी इस समस्या को दूर करता है—

- सही समय पर सही जानकारी प्रदान करता है
- वैज्ञानिकों और किसानों के बीच डिजिटल पुल बनाता है
- निर्णय लेने की क्षमता बढ़ाता है
- उत्पादन और गुणवत्ता दोनों में सुधार लाता है

किसान सारथी लॉन्च करने का उद्देश्य

किसान सारथी का मुख्य उद्देश्य है—

- किसानों को फसल-विशिष्ट, स्थान-विशिष्ट एवं वैज्ञानिक सलाह समय पर उपलब्ध कराना
- कृषि विज्ञान केंद्रों और किसानों के बीच सुदृढ़ डिजिटल सेतु स्थापित करना
- किसानों को आधुनिक तकनीकों, नवीन शोधों और बेहतर कृषि-प्रक्रियाओं से जोड़ना
- डिजिटल माध्यमों से कृषि में ज्ञान की पहुँच और सुलभता बढ़ाना

यह प्लेटफॉर्म किसानों को स्वावलंबी बनाने और उनकी उत्पादन क्षमता बढ़ाने की दिशा में एक अत्यंत महत्वपूर्ण कदम है।

किसान सारथी में पंजीकरण कराने की प्रक्रिया

किसान सारथी प्लेटफॉर्म से लाभ लेने के लिए किसानों को सबसे पहले पंजीकरण कराना आवश्यक है।

इस सुविधा का लाभ लेने के लिए किसान निम्न माध्यमों से पंजीकरण कर सकते हैं—

- टोल-फ्री नंबर: 1800-123-2175 या 144-26 पर कॉल करके
- कॉल का समय: प्रातः 10 बजे से सायं 5 बजे तक

कार्यालय समय के बाद किए गए कॉल रिकॉर्ड कर लिए जाते हैं तथा किसानों द्वारा दर्ज की गई समस्याओं का समाधान लघु संदेश सेवा (SMS) या कृषि विशेषज्ञों द्वारा कॉल के माध्यम से किया जाता है।

इसके अतिरिक्त किसान अपने नजदीकी कृषि विज्ञान केंद्र (KVK) पहुँचकर भी किसान सारथी प्लेटफॉर्म पर पंजीकरण करा सकते हैं।

पंजीकरण के समय किसानों को निम्न जानकारियाँ भरनी आवश्यक होती हैं—

- जोत का आकार
- पशुओं की संख्या
- उपलब्ध सिंचाई के साधन
- बोई जाने वाली प्रमुख फसलों की जानकारी

पंजीकरण के पश्चात किसान किसान सारथी के माध्यम से सीधे कृषि विज्ञान केंद्र के वैज्ञानिकों से संवाद कर सकते हैं तथा कृषि एवं संबद्ध क्षेत्रों (बागवानी, पशुपालन, मत्स्य पालन आदि) से संबंधित व्यक्तिगत सलाह प्राप्त कर सकते हैं।

ऑनलाइन पंजीकरण की प्रक्रिया

ऑनलाइन पंजीकरण के माध्यम से इस सुविधा का लाभ उठाने के लिए किसानों को सबसे पहले किसान सारथी प्लेटफॉर्म पर Show Interest बटन पर क्लिक कर अपनी मूल (बेसिक) जानकारी पोर्टल पर भरनी होती है, जैसे–

- किसान का नाम
- राज्य
- जिला
- संबंधित कृषि विज्ञान केंद्र का चयन

किसान द्वारा पूछे गए प्रश्नों के विषय के अनुसार संबंधित विशेषज्ञ (एक्सपर्ट) किसान की प्रोफाइल "Know Your Farmer (KYF)" को एक्सेस कर पाते हैं। किसान अपनी सुविधा के अनुसार टेक्स्ट या वॉइस संदेश के माध्यम से अपनी समस्या भेज सकते हैं।

आसान शब्दों में

यह प्लेटफॉर्म ठीक उसी तरह कार्य करता है, जैसे टेली-कंसल्टेंसी प्रणाली काम करती है। जिस प्रकार हम घर बैठे किसी डॉक्टर से अपॉइंटमेंट बुक करते हैं और फिर प्लेटफॉर्म हमें उस डॉक्टर या संबंधित अधिकारी से जोड़ देता है, उसी प्रकार किसान सारथी भी किसानों को संबंधित वैज्ञानिक से जोड़ता है। किसान अपनी समस्या मैसेज या वॉइस नोट के माध्यम से बताते हैं और फिर संबंधित वैज्ञानिक से उन्हें जोड़ा जाता है, जहाँ से समाधान और परामर्श प्राप्त होता है।

किसान सारथी की सुविधाएँ

- किसान सारथी डिजिटल प्लेटफॉर्म के माध्यम से किसानों को उनकी खेती की स्थिति के अनुसार व्यक्तिगत सलाह प्रदान की जाती है। (जैसे– सोयाबीन किसानों को सोयाबीन संबंधी और बागवानी करने वाले किसानों को बागवानी संबंधी जानकारी)
- कृषि संबंधी नवीनतम तकनीकी जानकारी का समृद्ध ज्ञानकोष (Expert System) ऑनलाइन प्लेटफॉर्म पर उपलब्ध है।
- विषय-विशेषज्ञों के साथ किसान स्थानीय भाषा में सीधा संवाद कर सकते हैं।
- कहीं भी और कभी भी पिछली सलाहों की उपलब्धता रहती है।
- डैशबोर्ड और सूचना प्रबंधन प्रणाली (MIS) के माध्यम से निगरानी एवं मूल्यांकन किया जाता है, ताकि गुणवत्तापूर्ण सेवाएँ सुनिश्चित की जा सकें।

कॉल से जुड़ी सुविधाएँ

किसान सारथी प्लेटफॉर्म पर निम्न कॉल सुविधाएँ उपलब्ध हैं–

- मोबाइल पर कॉल
- क्लिक-टू-कॉल सुविधा
- कॉल कॉन्फ्रेंसिंग
- कॉल रिकॉर्डिंग

इन सुविधाओं के माध्यम से विभिन्न विषय-विशेषज्ञ एक ही समय पर किसान से संवाद कर सकते हैं तथा उसकी समस्या का समाधान या आवश्यक सलाह प्रदान कर सकते हैं।

निष्कर्ष

समग्र रूप से देखा जाए तो किसान सारथी भारतीय कृषि व्यवस्था को डिजिटल रूप से सशक्त बनाने की दिशा में एक क्रांतिकारी पहल है। यह केवल एक सूचना मंच नहीं, बल्कि किसानों और वैज्ञानिकों के बीच एक जीवंत सेतु के रूप में कार्य करता है, जो समय पर, भरोसेमंद और क्षेत्र-विशिष्ट सलाह उपलब्ध कराता है।

बदलते जलवायु परिदृश्य, आधुनिक तकनीकों के प्रसार और बढ़ती प्रतिस्पर्धा के इस दौर में किसानों का डिजिटल रूप से सक्षम होना अनिवार्य है। किसान सारथी इस आवश्यकता को प्रभावी रूप से पूरा करता है।

इसके उपयोग से किसानों को कृषि संबंधी समस्याओं के समाधान के लिए प्रयोगशालाओं या संस्थानों तक जाने की आवश्यकता नहीं रहती, बल्कि वैज्ञानिक सलाह सीधे उनके मोबाइल तक पहुँचती है। इससे न केवल समय और लागत की बचत होती है, बल्कि कृषि निर्णय अधिक वैज्ञानिक, सटीक और लाभकारी बनते हैं।

आज किसान सारथी जैसा प्लेटफॉर्म भविष्य की स्मार्ट कृषि का आधार बन रहा है, जो किसानों को आत्मनिर्भर, तकनीक-सक्षम और बेहतर उत्पादक बनाने की दिशा में निरंतर प्रयासरत है।

महिला किसानों द्वारा जैव-उर्वरकों का वैज्ञानिक प्रयोग: सतत कृषि एवं सशक्तिकरण की दिशा में एक प्रभावी दृष्टिकोण

बृजेश कुमार मिश्र*, कृष्णाशीष दास, सीमा सांगवान एवं राधा प्रसन्ना
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

भारत की कृषि व्यवस्था में महिलाओं की भूमिका ऐतिहासिक रूप से महत्वपूर्ण रही है, किंतु वर्तमान परिप्रेक्ष्य में यह और भी अधिक निर्णायक बनती जा रही है। कृषि मंत्रालय एवं भारत की जनगणना (2011) के अनुसार, देश की कुल कृषि श्रम शक्ति में महिलाओं की भागीदारी लगभग 33–36% है, जबकि ग्रामीण कृषि कार्यों में उनकी हिस्सेदारी इससे भी अधिक है। महिला किसान न केवल उत्पादन में योगदान देती हैं, बल्कि पारंपरिक कृषि ज्ञान, प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन तथा टिकाऊ खेती की पद्धतियों को संरक्षित रखने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। भारत की कृषि प्रणाली में महिला किसानों की भूमिका केवल श्रम तक सीमित नहीं है, बल्कि वे बीज चयन, रोपाई, निराई-गुड़ाई, कटाई, भंडारण तथा घरेलू स्तर पर कृषि संसाधनों के प्रबंधन में भी सक्रिय भागीदारी निभाती हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में, विशेषकर जब पुरुष सदस्य रोजगार की तलाश में बाहर चले जाते हैं, तब महिलाएँ ही खेतों की प्रमुख संचालक बन जाती हैं। बदलते जलवायु परिदृश्य, घटती मृदा उर्वरता, जल संकट और बढ़ती उत्पादन लागत के संदर्भ में यह आवश्यक हो गया है कि महिला किसान ऐसी कृषि तकनीकों को अपनाएँ जो कम लागत, पर्यावरण के अनुकूल और दीर्घकालीन रूप से टिकाऊ हों। जैव-उर्वरकों का वैज्ञानिक प्रयोग इस दिशा में एक प्रभावी समाधान के रूप में उभरा है, जो न केवल फसल उत्पादन में सुधार करता है, बल्कि महिलाओं की कृषि-निर्भर आजीविका को भी अधिक सुरक्षित, स्वास्थ्यवर्धक और लाभकारी बनाता है।

अनेक अध्ययनों से यह सिद्ध हुआ है कि जैविक कृषि (कम्पोस्ट और हरित खाद) फसल चक्र, कृत्रिम पोषक तत्वों के सीमित उपयोग और बिना कीटनाशकों के उपयोग के माध्यम से उच्च सूक्ष्मजीवी गतिविधि सहित मृदा गुणवत्ता में सुधार करती है। रासायनिक उर्वरकों की लागत और उनके मृदा स्वास्थ्य व फसल उत्पादकता पर नकारात्मक प्रभावों के प्रति बढ़ती जागरूकता ने टिकाऊ कृषि में मृदा सूक्ष्मजीवों की केंद्रीय भूमिका को रेखांकित किया है।

फसल उत्पादकता मृदा में उपलब्ध पोषक तत्वों की मात्रा पर निर्भर करती है, जो मृदा सूक्ष्मजीवी जैवभार के रूपांतरण से नियंत्रित होती है। सूक्ष्मजीवों की वृद्धि और गतिविधि मृदा के पोषण, बनावट, pH, तापमान और नमी जैसे गुणों पर निर्भर करती है, इसलिए वे मृदा गुणों में होने वाले परिवर्तनों के संवेदनशील सूचक हैं। जैव उर्वरक, जैव कीटनाशक और अन्य सूक्ष्मजीवी इनपुट, जो रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों के उपयोग को घटाते हैं, विशेष रूप से कम्पोस्ट और कृषि अपशिष्टों के साथ, व्यापक ध्यान आकर्षित कर रहे हैं। परंपरागत रूप से लाभकारी सूक्ष्मजीवों का कृषि में उपयोग मुख्यतः माइकोराइज़ल फफूंद या राइजोबिया जैसे सुविख्यात सूक्ष्मजीवों तक सीमित रहा है। इक्कीसवी सदी के नये अध्ययनों का अधिकांश भाग पौध वृद्धि-प्रोत्साहन या जैविक एवं अजैविक तनाव सहनशीलता तक विस्तृत हो रहा है। ऐसे पौध वृद्धि-प्रोत्साहक राइजोबैक्टीरिया (PGPR) विभिन्न तंत्रों के माध्यम से पौध वृद्धि को बढ़ाते हैं। इनके विविधता, उपनिवेशण क्षमता और क्रियाविधि की समझ में वर्तमान प्रगति ने इन्हें सतत कृषि प्रबंधन का एक विश्वसनीय घटक बनाया है।

इसी कड़ी में विदित रहे कि "जैव-उर्वरक ऐसे जैविक उत्पाद होते हैं जिनमें जीवित सूक्ष्मजीव होते हैं और जो पौधों को आवश्यक पोषक तत्व उपलब्ध कराने में सहायता करते हैं"। ये सूक्ष्मजीव मिट्टी में पहले से मौजूद पोषक तत्वों को घुलनशील एवं अवशोषण योग्य रूप में परिवर्तित करते हैं अथवा वायुमंडलीय नाइट्रोजन को स्थिर कर पौधों को उपलब्ध कराते हैं। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद और खाद्य एवं कृषि संगठन द्वारा किए गए वैज्ञानिक अध्ययनों से यह स्पष्ट हुआ है कि जैव-उर्वरकों का सही एवं नियमित प्रयोग फसलों की उपज में औसतन 10 से 25 प्रतिशत तक वृद्धि कर सकता है तथा रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता में उल्लेखनीय कमी ला सकता है। इसके अतिरिक्त, जैव-उर्वरकों का उपयोग मिट्टी की जैविक सक्रियता, संरचना और दीर्घकालीन उर्वरता को बनाए रखने में सहायक सिद्ध होता है।

भारत में जैव-उर्वरक उद्योग पिछले दो दशकों में तीव्र गति से विकसित हुआ है। कृषि मंत्रालय और भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद से संकलित रिपोर्टों के अनुसार, देश में जैव-उर्वरकों का उत्पादन लगातार बढ़ रहा है, विशेषकर तरल जैव-उर्वरकों के क्षेत्र में। वर्ष 2010–11 में जहाँ ठोस जैव-उर्वरकों का उत्पादन लगभग 76,000 टन तक सीमित था और तरल जैव-उर्वरकों का लगभग नगण्य उत्पादन था, 2020–21 तक यह क्षेत्र उल्लेखनीय रूप से सुदृढ़ हो गया। इस अवधि में ठोस जैव-उर्वरकों का उत्पादन बढ़कर 1,34,323 टन तक पहुँच गया तथा तरल जैव-उर्वरकों का उत्पादन 26,442 किलोलीटर दर्ज किया गया (स्रोत: खुराना, ए., एवं

कुमार, वी. (2022). *स्टेट ऑफ बायोफर्टिलाइजर्स एंड ऑर्गेनिक फर्टिलाइजर्स इन इंडिया*. सेंटर फॉर साइंस एंड एनवायरनमेंट, नई दिल्ली), जो देश में जैव-उर्वरक उद्योग की तीव्र वृद्धि और बढ़ती कृषि-उपयोगिता को स्पष्ट रूप से दर्शाता है।

सतत कृषि के लिए सूक्ष्मजीव

पिछले कुछ दशकों में जैव उर्वरकों के रूप में सूक्ष्मजीव एक कम लागत वाले तथा पर्यावरण-अनुकूल विकल्प के रूप में उभरे हैं, जो फसल उत्पादकता और मृदा स्वास्थ्य में सतत रूप से सुधार कर सकते हैं। रिपोर्टों के अनुसार, जैव उर्वरकों के उपयोग से प्रोटीन, आवश्यक अमीनो अम्लों, विटामिनों की मात्रा तथा नाइट्रोजन स्थिरीकरण में वृद्धि के माध्यम से फसल उपज में लगभग 10–25% तक की बढ़ोतरी होती है। जैव उर्वरक विभिन्न तंत्रों के माध्यम से पौध वृद्धि में सुधार करते हैं जैसे:

(i) मृदा पोषक तत्वों (स्थूल तथा सूक्ष्म पोषक तत्वों) को घुलनशील /गतिशील कर उन्हें पौधों के लिए उपलब्ध बनाना ।
(ii) फाइटोहॉर्मोन एवं वृद्धि नियामकों का संश्लेषण ।
(iii) अजैविक तनावों का प्रबंधन ।
(iv) पौध रोगजनकों से संरक्षण ।

आजकल कई नये पौध-वृद्धि-प्रोत्साहक राइजोबैक्टीरिया (पीजीपीआर) को जैव उर्वरकों के रूप में फसल उपज और उत्पादकता बढ़ाने हेतु उपयोग किया जा रहा है।

इसके अतिरिक्त यह जानना भी आवश्यक है कि केवल विभिन्न कृषि-रसायनों का उपयोग ही नहीं, बल्कि भूमि उपयोग और कृषि-पारितंत्रों में होने वाले परिवर्तन भी मृदा के सूक्ष्मजीवी समुदाय की संरचना को प्रभावित करते हैं, और इसका उलटा प्रभाव भी संभव है। परिणामस्वरूप, विभिन्न संयोजनों में उगाई जाने वाली फसल प्रजातियों का प्रभाव उस सूक्ष्मजीवी समुदाय की संरचना निर्धारित करने में महत्त्वपूर्ण होता, जो पोषक तत्व चक्रण, पौध वृद्धि हार्मोन उत्पादन तथा जड़ रोगों के दमन में लाभकारी भूमिका निभा सकता है। अतः फसल उत्पादकता में सुधार के लिए मृदा उर्वरता और मृदा के भौतिक गुणों का समुचित उपयोग एवं प्रबंधन भी आवश्यक है।

वर्तमान चुनौतियों—जैसे सूखा, मृदा उर्वरता में कमी, जलवायु परिवर्तन तथा मृदा प्रदूषण—के संदर्भ में पौध और सूक्ष्मजीवों के बीच जटिल किंतु लाभकारी अंतःक्रियाओं को समझने के लिए अभी बहुत कुछ खोजा जाना शेष है। सतत् कृषि पद्धतियों के माध्यम से खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए मृदा सूक्ष्मजीवों की भूमिका निस्संदेह कृषि-पारिस्थितिकी तंत्र की उत्पादकता का एक उच्च प्राथमिकता वाला घटक है।

जैव-उर्वरकों का प्रयोग और वैज्ञानिक लाभ: जैव-उर्वरकों का प्रभावी उपयोग तभी संभव है जब उन्हें सही समय, सही मात्रा और सही विधि से प्रयोग किया जाए। यह आवश्यक है कि महिला किसान यह समझें कि जैव-उर्वरक जीवित उत्पाद होते हैं और इन्हें अत्यधिक गर्मी, सीधी धूप, नमी की कमी अथवा रासायनिक पदार्थों के संपर्क में आने से बचाया जाना चाहिए। बीज उपचार के पश्चात बीजों को लंबे समय तक नहीं रखना चाहिए और यथाशीघ्र बोआई कर देनी चाहिए। मिट्टी में जैव-उर्वरक डालते समय यह सुनिश्चित करना आवश्यक है कि मिट्टी में पर्याप्त नमी हो, जिससे सूक्ष्मजीव सक्रिय रह सकें और प्रभावी ढंग से कार्य कर सकें। तरल जैव-उर्वरकों का छिड़काव प्रायः सुबह या शाम के समय करना अधिक उपयुक्त होता है, जब तापमान अपेक्षाकृत कम होता है और सूक्ष्मजीवों की जीवित रहने की संभावना अधिक रहती है।

जैव-उर्वरकों का प्रयोग मुख्यतः निम्नलिखित विधियों से किया जाता है:

बीज उपचार: महिला किसानों के लिए जैव-उर्वरकों का सबसे सरल, सुरक्षित और प्रभावी उपयोग बीज उपचार के माध्यम से किया जा सकता है। इस विधि में बोआई से पूर्व बीजों को जैव-उर्वरक से उपचारित किया जाता है, जिससे लाभकारी सूक्ष्मजीव अंकुरण के साथ ही पौधों की जड़ों के संपर्क में आ जाते हैं। इससे पौधों की प्रारंभिक वृद्धि तीव्र होती है, जड़ प्रणाली मजबूत बनती है और पोषक तत्वों का अवशोषण अधिक प्रभावी ढंग से होता है। बीज उपचार की प्रक्रिया कम लागत वाली, समय की दृष्टि से सुविधाजनक और तकनीकी रूप से सरल होती है, जिससे महिलाएँ इसे अपने घरेलू और खेत स्तर के कार्यों में आसानी से सम्मिलित कर सकती हैं। दलहनी फसलों में इस विधि का विशेष महत्व है, क्योंकि जैव-उर्वरकों के माध्यम से नाइट्रोजन स्थिरीकरण की प्रक्रिया अधिक प्रभावी हो जाती है, जिससे रासायनिक नाइट्रोजन उर्वरकों की आवश्यकता में उल्लेखनीय कमी आती है।

मिट्टी में मिलाना: मिट्टी में जैव-उर्वरकों का प्रयोग महिला किसानों के लिए एक अन्य प्रभावी एवं व्यावहारिक विधि है। इस विधि में जैव-उर्वरकों को गोबर खाद, वर्मी कम्पोस्ट अथवा अन्य जैविक खादों के साथ मिलाकर खेत में प्रयोग किया जाता है। इससे लाभकारी सूक्ष्मजीव सीधे मिट्टी में सक्रिय हो जाते हैं और धीरे-धीरे पूरे खेत में फैलकर मिट्टी की जैविक गतिविधि को सुदृढ़ करते हैं। यह प्रक्रिया मिट्टी की संरचना में सुधार करती है, जल धारण क्षमता बढ़ाती है और पौधों की जड़ों के आसपास एक संतुलित सूक्ष्मजीव वातावरण का निर्माण करती है। महिला किसान, जो पारंपरिक रूप से जैविक खादों के संग्रहण और उपयोग में दक्ष होती हैं, इस विधि को सहजता से अपने कृषि कार्यों में सम्मिलित कर सकती हैं। इससे भूमि की उत्पादकता बनी रहती है और दीर्घकालीन उर्वरता में स्थिरता आती है।

पत्तियों पर छिड़काव: कुछ तरल जैव-उर्वरकों के माध्यम से पत्तियों पर छिड़काव की विधि भी पौधों को शीघ्र पोषण उपलब्ध कराने का

तालिका 1: भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान द्वारा विकसित प्रमुख जैव-उर्वरकों का विवरण

प्रमुख फसल	उपलब्धता बढ़ाने के लिए अनुशंसित जैवउर्वरक			
	नाइट्रोजन	फॉस्फोरस	पोटैशियम	सूक्ष्म पोषक
धान, गेंहू, मक्का	बीजीए (पूसा सायनोन्यूट्रिकॉन, पूसा सायनोफोर्ट), पूसा एज़ोस्पिरिलम पूसा बायोफोर्ट, पूसा संजीवनी	पूसा बायोफॉस, पूसा माइकोराइजा (केवल मिट्टी में प्रयोग), पूसा संजीवनी पूसा बायोफोर्ट	पूसा बायोपोटाश, पूसा संजीवनी, पूसा बायोफोर्ट	पूसा बायोजिंक, पूसा बायोआयरन, पूसा बायोफोर्ट, बीजीए (पूसा साइनोन्यूट्रिकॉन, पूसा साइनोफोर्ट), पूसा संजीवनी
बाजरा	पूसा एआईएम, पूसा सम्पूर्ण	पूसा बायोफॉस, पूसा माइकोराइजा	पूसा बायोपोटाश	पूसा बायोजिंक, पूसा बायोआयरन, पूसा बायोफोर्ट, बीजीए (पूसा सायनोन्यूट्रिकॉन, पूसा सायनोफोर्ट)
दलहन / तिलहन	पूसा राइजोबियम, पूसा एजोटोबैक्टर, पूसा साइनोबायोकॉन, पूसा सम्पूर्ण	पूसा बायोफॉस, पूसा माइकोराइजा	पूसा बायोपोटाश	पूसा बायोजिंक, पूसा बायोआयरन, पूसा बायोफोर्ट, बीजीए (पूसा सायनोन्यूट्रिकॉन, पूसा सायनोफोर्ट)
चारा फसलें	पूसा माइकोराइजा, पूसा एआईएम, पूसा एज़ोस्पिरिलम			
सब्जियाँ / फूल वाली फसलें	पूसा एज़ोटोबैक्टर, बीजीए (पूसा साइनोबायोकॉन, पूसा साइनोन्यूट्रिकॉन, पूसा साइनोफोर्ट) पूसा माइकोराइज़ा, पूसा साइनोन्यूट्रिकॉन, पूसा साइनोफोर्ट; पूसा सम्पूर्ण, पूसा संजीवनी, पूसा बायोज़िंक, पूसा बायोआयरन, पूसा बायोफोर्ट			
फलदार वृक्ष	पूसा एजोटोबैक्टर; पूसा माइकोराइजा; पूसा सम्पूर्ण; बीजीए- पूसा साइनोन्यूट्रिकॉन			

एक वैज्ञानिक और प्रभावी उपाय है। इस विधि में जैव-उर्वरक को अनुशंसित मात्रा में पानी में घोलकर पौधों की पत्तियों पर छिड़का जाता है, जिससे सूक्ष्मजीव और उनके जैव-रासायनिक उत्पाद सीधे पौधों के ऊतकों के संपर्क में आते हैं। यह विधि विशेष रूप से उस समय उपयोगी होती है जब पौधों को पोषण तनाव का सामना करना पड़ता है, जैसे सूखा, अधिक तापमान, पोषक तत्वों की कमी अथवा रोगों का प्रारंभिक संक्रमण। महिला किसान, जो नियमित रूप से खेत की निगरानी और फसलों की देखभाल करती हैं, इस विधि को अपनाकर पौधों की स्थिति में शीघ्र सुधार ला सकती हैं, जिससे उत्पादन में स्थिरता बनी रहती है।

जैव-उर्वरकों के प्रयोग से लाभ

- फसल उत्पादन में 10–25% तक वृद्धि ।
- रासायनिक उर्वरकों की लागत में 30–40% तक कमी ।
- मिट्टी की जैविक गुणवत्ता में उल्लेखनीय सुधार ।
- जल स्रोतों में नाइट्रेट एवं फॉस्फेट प्रदूषण में कमी ।

यह लाभ धान, गेहूँ, दलहन, तिलहन, कपास एवं सब्जी फसलों में विशेष रूप से देखे गए हैं। विभिन्न फसलों में जैव-उर्वरकों का प्रयोग अलग-अलग रूपों में लाभकारी सिद्ध होता है। धान जैसी प्रमुख खाद्य फसलों में जैव-उर्वरकों का उपयोग जड़ों के विकास को प्रोत्साहित करता है तथा नाइट्रोजन एवं फॉस्फोरस की उपलब्धता को बढ़ाकर दानों की संख्या और भार में वृद्धि करता है। गेहूँ में जैव-उर्वरकों का प्रयोग मिट्टी की उर्वरता बनाए रखने, पोषक तत्वों के संतुलन में सुधार करने और पौधों की समग्र वृद्धि को प्रोत्साहित करने में सहायक होता है। दलहनी फसलों में जैव-उर्वरकों का महत्व और भी अधिक होता है, क्योंकि ये फसलें स्वयं नाइट्रोजन स्थिरीकरण की क्षमता रखती हैं और जैव-उर्वरकों के माध्यम से इस प्राकृतिक प्रक्रिया को और अधिक प्रभावी बनाया जा सकता है। तिलहनी फसलों और सब्जियों में जैव-उर्वरकों का प्रयोग पौधों की वृद्धि, पुष्पन और फलन को प्रोत्साहित करता है, जिससे उपज के साथ-साथ उत्पाद की गुणवत्ता में भी सुधार होता है।

महिला किसानों के लिए जैव-उर्वरकों के प्रयोग का एक अत्यंत महत्वपूर्ण पक्ष स्वास्थ्य सुरक्षा से संबंधित है। रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों के निरंतर और अत्यधिक उपयोग से महिलाओं को त्वचा रोग, श्वसन संबंधी समस्याएँ और अन्य स्वास्थ्य जोखिमों का सामना करना पड़ सकता है, विशेषकर तब जब वे पर्याप्त सुरक्षा उपकरणों के बिना इन पदार्थों के संपर्क में आती हैं। जैव-उर्वरकों का प्रयोग इन जोखिमों को काफी हद तक कम करता है, जिससे महिलाओं और उनके परिवारों का स्वास्थ्य अधिक सुरक्षित रहता है। इसके अतिरिक्त, जैव-उर्वरकों से उत्पादित खाद्यान्न अधिक सुरक्षित

और पोषण की दृष्टि से बेहतर होते हैं, जो ग्रामीण परिवारों के पोषण स्तर में सुधार लाने में सहायक सिद्ध होते हैं।

पर्यावरणीय संरक्षण और जलवायु परिवर्तन में योगदान: जैव-उर्वरकों का प्रयोग पर्यावरण संरक्षण की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है:

- जैव-उर्वरक मिट्टी में जैविक कार्बन भंडारण को बढ़ाते हैं।
- रासायनिक उर्वरकों के अत्यधिक प्रयोग से होने वाले ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन में कमी आती है।
- मिट्टी की जैव विविधता एवं सूक्ष्मजीव समुदाय को पुनर्जीवित किया जाता है।
- जल स्रोतों में पोषक तत्व प्रदूषण कम होता है।

पर्यावरणीय दृष्टि से भी जैव-उर्वरकों का प्रयोग दीर्घकालीन कृषि स्थिरता के लिए अत्यंत आवश्यक है। रासायनिक उर्वरकों के अत्यधिक उपयोग से मिट्टी की जैविक सक्रियता में कमी, जल स्रोतों में नाइट्रेट प्रदूषण और ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन जैसी गंभीर समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। इसके विपरीत, जैव-उर्वरकों का प्रयोग मिट्टी में जैविक कार्बन की मात्रा बढ़ाता है, जिससे मिट्टी की संरचना, जल धारण क्षमता और पोषक तत्वों की उपलब्धता में सुधार होता है। इससे सूखा, बाढ़ और अन्य जलवायु चरम परिस्थितियों के प्रभाव को कम करने में सहायता मिलती है। महिला किसान, जो प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण में परंपरागत रूप से महत्वपूर्ण भूमिका निभाती रही हैं, जैव-उर्वरकों के प्रयोग के माध्यम से पर्यावरण संरक्षण में और अधिक प्रभावी योगदान दे सकती हैं।

- आर्थिक दृष्टि से जैव-उर्वरकों का प्रयोग महिला किसानों के लिए अत्यंत लाभकारी सिद्ध होता है। रासायनिक उर्वरकों की बढ़ती लागत के बीच जैव-उर्वरकों का उपयोग उत्पादन लागत को कम करने में सहायक होता है। इसके साथ ही, बेहतर उपज और उत्पाद की गुणवत्ता के कारण किसानों को बाजार में बेहतर मूल्य प्राप्त होता है, जिससे कुल आय में वृद्धि होती है। अनेक वैज्ञानिक अध्ययनों से यह सिद्ध हुआ है कि जैव-उर्वरकों के नियमित उपयोग से फसलों की उत्पादकता में वृद्धि होती है और उत्पादन लागत में कमी आती है, जिससे लाभ-लागत अनुपात में सुधार होता है। महिला किसान, जो प्रायः सीमित संसाधनों के साथ कृषि कार्य करती हैं, जैव-उर्वरकों के माध्यम से कम निवेश में अधिक लाभ प्राप्त कर सकती हैं, जिससे उनकी आर्थिक स्थिति और आत्मनिर्भरता सुदृढ़ होती है।
- सामाजिक दृष्टि से भी जैव-उर्वरकों का प्रयोग महिला किसानों के सशक्तिकरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। जब महिलाएँ वैज्ञानिक एवं पर्यावरण-अनुकूल तकनीकों को अपनाकर सफल कृषि उत्पादन करती हैं, तो परिवार और समुदाय में उनकी भूमिका और सम्मान बढ़ता है। इससे महिलाओं की निर्णय लेने की क्षमता में वृद्धि होती है और वे कृषि संबंधी निर्णयों में अधिक सक्रिय एवं आत्मविश्वासपूर्ण भूमिका निभा पाती हैं। महिला स्वयं सहायता समूहों, किसान उत्पादक संगठनों और ग्राम स्तरीय कृषि समितियों के माध्यम से जैव-उर्वरकों के सामूहिक उपयोग और अनुभवों के आदान-प्रदान से सामुदायिक सीख की प्रक्रिया सुदृढ़ होती है, जिससे कृषि नवाचारों का प्रसार तीव्र होता है। इस प्रकार जैव-उर्वरकों का प्रयोग केवल एक तकनीकी परिवर्तन नहीं, बल्कि सामाजिक परिवर्तन का भी माध्यम बनता है।
- कृषि विस्तार सेवाओं, कृषि विज्ञान केंद्रों और राज्य कृषि विभागों की भूमिका महिला किसानों तक जैव-उर्वरकों के सही प्रयोग की जानकारी पहुँचाने में अत्यंत महत्वपूर्ण है। प्रशिक्षण कार्यक्रमों, क्षेत्र प्रदर्शन, किसान गोष्ठियों, महिला समूह बैठकों और ग्राम स्तरीय कार्यशालाओं के माध्यम से यदि महिलाओं को जैव-उर्वरकों के उपयोग की व्यावहारिक जानकारी दी जाए, तो उनकी अपनाने की दर में उल्लेखनीय वृद्धि हो सकती है। इसके अतिरिक्त, सफल महिला किसानों के अनुभवों और नवाचारों को साझा करने से अन्य महिलाएँ भी प्रेरित होती हैं और वे नई तकनीकों को अपनाने के लिए प्रोत्साहित होती हैं। इस प्रकार विस्तार सेवाएँ जैव-उर्वरकों के व्यापक प्रसार और महिला सशक्तिकरण के बीच एक प्रभावी सेतु का कार्य करती हैं।

निष्कर्ष एवं भावी दिशा

यह स्पष्ट है कि जैव-उर्वरकों का वैज्ञानिक एवं सही प्रयोग महिला किसानों के लिए सतत कृषि, बेहतर उत्पादन, सुरक्षित खाद्य प्रणाली और स्वस्थ पर्यावरण का मार्ग प्रशस्त करता है। यह न केवल मिट्टी और फसलों के स्वास्थ्य में सुधार करता है, बल्कि महिलाओं की आर्थिक स्थिति, सामाजिक प्रतिष्ठा और आत्मनिर्भरता को भी सुदृढ़ करता है। वर्तमान और भविष्य की कृषि चुनौतियों का प्रभावी ढंग से सामना करने के लिए यह आवश्यक है कि महिला किसानों को जैव-उर्वरकों के प्रयोग की समुचित जानकारी, तकनीकी प्रशिक्षण और संस्थागत समर्थन उपलब्ध कराया जाए, ताकि वे सतत कृषि विकास की अग्रणी शक्ति के रूप में अपनी भूमिका को और अधिक प्रभावी ढंग से निभा सकें।

इस प्रकार से सारांश यह है कि विभिन्न प्रकार के जैव-उर्वरकों के माध्यम से महिला किसानों का सशक्तिकरण न केवल कृषि क्षेत्र को अधिक टिकाऊ और पर्यावरण-अनुकूल बनाएगा, बल्कि सामाजिक न्याय और आर्थिक समावेशन की दिशा में भी एक निर्णायक भूमिका निभाएगा।

लेखकों से...

1. अपने तकनीकी एवं लोकप्रिय लेख हिन्दी में टाइप करवाकर भेजें।
2. रचना पृष्ठ के एक ओर उचित हाशिया और पंक्तियों के बीच स्थान छोड़कर सम्पादक, प्रसार दूत के पास यथा समय भेजें।
3. तकनीकी पर दी गई जानकारी की पूरी जिम्मेदारी लेखक की होगी। रचना को प्रकाशित करने या न करने का पूरा अधिकार सम्पादक मंडल को होगा।

प्रसार दूत का प्रकाशन समय

वार्षिक शुल्क ₹150/- मनीऑर्डर द्वारा भेजें।

शुल्क और सामग्री भेजने एवं पत्रिका मंगवाने का पता

प्रभारी अधिकारी

कृषि प्रौद्योगिकी सूचना केन्द्र (एटिक)

भा.कृ.अ.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110012

फोन: 011-25841670, 25841039

ई-मेंल: incharge_atic@iari.res.in

पाठकों से...

प्रसार दूत में प्रकाशित किसी भी तकनीकी के विषय में अंश और समाधान हेतु आपके पत्रों का स्वागत है। विषयों पर अधिक जानकारी के लिए लेखक से सीधे भी सम्पर्क कर सकते हैं।

किसानों से...

यदि आपकी खेती व पशु-पालन संबंधी कोई विशेष समस्या है, तो लिखकर भेजें। हम प्रसार दूत के माध्यम से उसका समाधान आप तक पहुंचाएंगे।

अन्त में ...

आपकी खुशहाली ही हमारी सफलता है।

प्रो. एम एस स्वामीनाथन पुस्तकालय

निदेशक, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012 द्वारा प्रकाशित तथा

मैसर्स प्रिंटसी

फोन नंबर: +91-7827124201